[1992] 3 उम० नि० प० 486

मिथिलेश कुमार सिन्हा

बनाम

राष्ट्रपतीय निर्वाचन के लिए रिटर्निंग आफिसर और अन्य

17 सितंबर, 1992

न्या० जे० एस० वर्मा, के० जयचन्द्र रेड्डी, एस० सी० अग्रवाल, योगेश्वर दयाल और ए० एस० आनन्द

राष्ट्रपतीय और उप-राष्ट्रपतीय निर्वाचन अधिनियम, 1952 (1952 का अधिनियम सं० 31), धारा 5-ख(1)(क), 5, 5-ङ(3)(ग)—राष्ट्रपति का निर्वाचन—नाम-निर्देशन पत्र—अभ्यर्थी का बाद में परिदत्त नाम-निर्देशन पत्र—अन्य अभ्यर्थी के पूर्वतर प्रस्तुत नाम-निर्देशन पत्र में सामान्य निर्वाचकों द्वारा हस्ताक्षरित—धारा 5-ङ(3) (ग) के अधीन नाम-निर्देशन पत्र का अस्वीकार किया जाना उचित है ।

राष्ट्रपतीय और उप-राष्ट्रपतीय निर्वाचन अधिनियम, 1952 (1952 का अधिनियम सं० 31) धारा 14-क, 13(क)—राष्ट्रपति का निर्वाचन—अधिकार को चुनौती—याची (अर्जीदार) द्वारा विधिमान्य नाम-निर्देशन के लिए आज्ञापक अभ्यपेक्षाओं का अनपालन—वह धारा 13(क) के अर्थान्तर्गत, "अभ्यर्थी" नहीं है—अतः वह निर्वाचन-याचिका प्रस्तुत करने के लिए सक्षम नहीं है।

राष्ट्रपतीय और उप-राष्ट्रपतीय निर्वाचन अधिनियम, 1952 (1952 का अधिनियम सं० 31)—धारा 17—निर्वाचन-याचिका (अर्जी)—कोई विचारणीय विवाद्यक उद्भूत नहीं होता है—न्यायालय केवल धारा 17 के कारण विचारण जारी रखने के लिए बाध्य नहीं है।

राष्ट्रपतीय और उप-राष्ट्रपतीय निर्वाचन अधिनियम, 1952 (1952 का अधिनियम सं० 31), धारा 18(1) (ग)—निर्वाचन-याचिका—नाम-निर्देशन पत्र का स्वीकार किया जाना—नाम-निर्देशन पत्र में, सारभूत स्वरूप का किसी दोष का दर्शित या अभिवाचित न किया जाना—धारा 18(1) (ग) में अंतर्विष्ट आधार के विचारण हेतु किसी वाद-हेतुक को प्रकट न करने वाली याचिका खारिज किए जाने योग्य है।

राष्ट्रपतीय और उप-राष्ट्रपतीय निर्वाचन अधिनियम, 1952 (1952 का 31)—धारा 14, 18, 19, सहपठित उच्चतम न्यायालय नियमावली का भाग 3, आदेश 23—निर्वाचन अर्जी—धारा 14 के अधीन फाइल की गई निर्वाचन अर्जी पर विचार करते हुए उच्चतम न्यायालय इस प्रश्न की जांच नहीं कर सकता कि क्या निर्वाचित अभ्यर्थी उस पद के लिए उपयुक्त है, जिसके लिए उसका निर्वाचन किया गया है।

राष्ट्रपतीय और उप-राष्ट्रपतीय निर्वाचन अधिनियम, 1952 (1952 का 31)—धारा 18(1) (क)—निर्वाचन अर्जी—असम्यक् असर—निर्वाचन अर्जीदार द्वारा यह अभिवचन किया जाना कि निर्वाचन में निर्वाचित अभ्यर्थी की सम्मति से असम्यक् असर डाला गया है—धारा 18(1) (क) की मुख्य अपेक्षा यह है कि असम्यक् असर निर्वाचित अभ्यर्थी की सम्मति से किसी अन्य व्यक्ति द्वारा डाला जाना चाहिए।

संविधान, 1950—अनुच्छेद 71(1) [सपठित राष्ट्रपतीय और उप-राष्ट्रपतीय निर्वाचन अधिनियम, 1952 की धारा 18(1)]—अविधिमान्यता—धारा 18(1) (क), संविधान के अनुच्छेद 71(1) के अधिकारातीत नहीं है।

राष्ट्रपतीय और उप-राष्ट्रपतीय निर्वाचन अधिनियम, 1952 (1952 का 31)—भाग 3—इस भाग की विधिमान्यता को चुनौती दिया जाना—उक्त भाग संविधान के अधीन उच्चतम न्यायालय की अधिकारिता को कम नहीं करता—अतः वह अनुच्छेद 71(1) के अधिकारातीत नहीं है।

राष्ट्रपतीय और उप-राष्ट्रपतीय निर्वाचन अधिनियम, 1952 (1952 का 31)—धारा 18—निर्वाचित अभ्यर्थी के निर्वाचन को शून्य घोषित करने के आधार—चूंकि अधिनियम का भाग 3 अनुच्छेद 71(1) के अधिकारातीत नहीं है, अतः याची (पिटीशनर)

राष्ट्रपति के निर्वाचन को धारा 18 में उल्लिखित आधारों के सिवाय अन्य आधारों पर चुनौती नहीं दे सकता।

राष्ट्रपति और उप-राष्ट्रपतीय निर्वाचन अधिनियम, 1952 (1952 का 31)—धारा 5(2)—अभ्यर्थियों का नाम-निर्देशन—अभ्यर्थी द्वारा नाम-निर्देशन पत्र पर हस्ताक्षर करने के बाद प्रस्थापक और समर्थक द्वारा हस्ताक्षर किया जाना—इस विषय में यह धारणा की जाएगी कि जिस समय विधानमंडल ने अधिनियम को अधिनियमित किया था, तब वह विधि की इस स्थिति से अवगत था कि भारत में इस विधि का इसी रूप में निर्वचन किया गया है, अतः उसका यह आशय था कि नाम-निर्देशन पत्र उस स्थिति में अविधिमान्य नहीं होंगे जबकि अभ्यर्थी ने प्रस्थापक और समर्थक द्वारा हस्ताक्षर करने से पूर्व उस पर हस्ताक्षर किए हों।

राष्ट्रपतीय और उप-राष्ट्रपतीय निर्वाचन अधिनियम, 1952 (1952 का 31)—धारा 18—असम्यक् असर का अर्थ—अभ्यर्थी (पिटीशनर) के वैयक्तिक शील और आचरण के संबंध में तथ्यों का मिथ्या कथन किया जाना—ऐसे कथन इस धारा के अर्थान्तर्गत असम्यक् असर का गठन करते हैं।

राष्ट्रपतीय और उप-राष्ट्रपतीय निर्वाचन नियम, 1952—नियम 4(1) और 4(2)—नाम-निर्देशन पत्रों का उपस्थित किया जाना—इन नियमों की इस अपेक्षा को कि हर एक अभ्यर्थी अपना नाम-निर्देशन संसदीय निर्वाचन क्षेत्र की उस निर्वाचक नामावली में के अभ्यर्थी से संबद्ध प्रविष्टि की प्रमाणित प्रति सहित, जिसमें उस अभ्यर्थी का नाम रजिस्ट्रीकृत है, रिटर्निंग आफिसर को प्रदत्त करेगा, इस आधार पर चुनौती कि वह 1952 के अधिनियम 31 की धारा 21 के अधीन केंद्रीय सरकार की नियम बनाने की शक्ति के अधिकारातीत है—चूंकि यह अपेक्षा राष्ट्रपति और उप-राष्ट्रपति के निर्वाचन के समुचित संचालन के लिए है, अतः वह युक्तियुक्त और विधिमान्य है तथा धारा 21 के अधिकारातीत नहीं है।

राष्ट्रपतीय और उप-राष्ट्रपतीय निर्वाचन नियम, 1952—नियम 4(3) और 6(3)—इन नियमों को इस आधार पर चुनौती कि किसी निर्वाचन में किसी निर्वाचक से प्रस्थापक या समर्थक के रूप में केवल एक बार हस्ताक्षर करने की अपेक्षा की गई है इसलिए वे 1952 के अधिनियम 31 की धारा 5(2) का उल्लंघन करते हैं—चूंकि ये नियम प्रत्यक्षतः समुचित निर्वाचन के लिए हितकर और साधक हैं, अतः वे धारा 5(2) का उल्लंघन नहीं करते।

भारतीय दंड संहिता, 1860 (1860 का 45)—धारा 171-ग और 171-छ, सहपठित राष्ट्रपतीय और उपराष्ट्रपतीय निर्वाचन अधिनियम, 1952, धारा 18—निर्वाचन के सिलसिले में असम्यक् असर—अभ्यर्थी (पिटीशनर) के वैयक्तिक शील और आचरण के संबंध में तथ्यों का मिथ्या कथन किया जाना—चूंकि इस प्रकार के मिथ्या कथनों से असम्यक् असर का गठन होता है इसलिए वे कथन धारा 171-छ के अंतर्गत आने पर भी धारा 171-ग के अधीन आते हैं।

शब्द और पद—"परिदत्त" शब्द का "वर्णित" के रूप में अर्थान्वयन नहीं किया जा सकता है।

याची ने यह अभिकथन किया है कि उसने भारत के राष्ट्रपति के पद पर निर्वाचन को लड़ने के लिए तारीख 30 मार्च, 1992 और तारीख 28 मई, 1992 के मध्य बीस विधायकों के हस्ताक्षर प्राप्त किए थे और अपना नामांकन पत्र तारीख 24 जून, 1992 को फाइल किया था। तथापि रिटर्निंग आफिसर द्वारा तारीख 25 जून, 1992 को नामांकन-पत्रों की संवीक्षा किए जाने पर, याची का नामांकन पत्र इस आधार पर अस्वीकृत कर दिया गया कि उस पर धारा 5ख(1)(क) द्वारा यथा अपेक्षित, कम-से-कम 10 निर्वाचकों द्वारा प्रस्थापक के रूप में और 10 निर्वाचकों द्वारा समर्थकों के रूप में हस्ताक्षर नहीं किए गए थे, और यह भी कि उनमें से कुछ के हस्ताक्षर, एक अन्य अभ्यर्थी (श्री राम जेठमलानी) के एक नामांकन पत्र में भी, जो नामांकन पत्र रिटर्निंग आफिसर को पहले दिया गया था, सम्मिलित होने के कारण धारा 5-ख(5) के अनुसार अप्रवर्तनीय (निष्प्रभाव) थे। तदनुसार रिटर्निंग आफिसर द्वारा अधिनियम की धारा 5(ङ)(3)(ग) के अधीन याची का नामांकन पत्र अस्वीकृत कर दिया गया। याची ने दलील दी है कि उसके नामांकन पत्र को अस्वीकृत करना गलत था, जो इस घोषणा के लिए धारा 18(1) (ग) के अधीन एक आधार है कि निर्वाचित अभ्यर्थी का निर्वाचन शून्य है। याचिका में किए गए प्रकथन अति विस्तृत (लंबे) और अस्पष्ट हैं और याचिका की कुछ अंतर्वस्तुएं असंगत और तुच्छ हैं। तथापि, न्यायालय ने याचिका की सुनवाई पर, याची से उसका सही आधार अभिनिश्चित किया। उसने इंगित किया कि वह अधिनियम की धारा 13(क) के अर्थान्तर्गत एक "अभ्यर्थी" था, क्योंकि उसका नामांकन-पत्र प्रस्थापकों और समर्थकों की अपेक्षित संख्या द्वारा हस्ताक्षरित किया गया था और इसलिए, उसका नामांकन पत्र गलत तौर से अस्वीकार किया गया था। उसका दावा है कि धारा 5-ख(5) उस नामांकन-पत्र को विधिमान्य मानती है, जिस पर प्रस्थापक/समर्थक पहले अपने हस्ताक्षर करते हैं, न कि उसे जो रिटर्निंग आफिसर को पहले परिदत्त किया गया हो। याची के अनुसार, उसके प्रस्थापकों और समर्थकों ने, जो श्री राम जेठमलानी के एक नामांकन पत्र में भी सम्मिलित (सामान्य) थे, याची के नामांकन पत्र पर समय की दृष्टि से पहले हस्ताक्षर किए थे और इसलिए, रिटर्निंग आफिसर को तारीख 24 जून, 1992 को श्री राम जेठमलानी के नामांकन पत्र के याची के नामांकन पत्र के परिदान से पहले दिए जाने का, याची के नामांकन पत्र पर समान हस्ताक्षरों को अप्रवर्तनीय करने का प्रभाव नहीं है। इस निर्वाचन याचिका में, सारतः याची का यही पक्षकथन है। इस प्रकार राष्ट्रपतीय और उप-राष्ट्रपतीय निर्वाचन अधिनियम, 1952 की धारा 14 के अधीन ये दोनों निर्वाचन याचिकाएं (अर्जी) डाक्टर शंकर दयाल शर्मा के भारत के नौवें राष्ट्रपति के पद पर निर्वाचन को आक्षेप करते हुए फाइल की गई हैं। रिटर्निंग आफिसर द्वारा नामांकन पत्रों की तारीख 25 जून, 1992 को की गई संवीक्षा के आधार पर केवल चार व्यक्तियों अर्थात् डा० शंकर दयाल शर्मा, प्रो० जी० जी० स्वेल, श्री राम जेठमलानी और काका जोगिंदर सिंह उर्फ धरतीपकड़ के नामांकन पत्र विधिमान्य पाए गए और तदनुसार स्वीकार किए गए। मतदान तारीख 13 जुलाई, 1992 को हुआ और निर्वाचन का परिणाम तारीख 16 जुलाई, 1992 को घोषित किया गया जिसमें डा० शंकर दयाल शर्मा को निर्वाचित घोषित किया गया और उन्हें तारीख 25 जुलाई, 1992 को भारत के नौवें राष्ट्रपति के पद पर शपथ दिलायी गई। 1992 की निर्वाचन याचिका सं० 1 में याची (मिथिलेश कुमार सिन्हा) ने निर्वाचन में अपना नामांकन पत्र फाइल किया था, किंतु एक विधिमान्य नामांकन के लिए आज्ञापक अपेक्षाओं के

अननुपालन के कारण उसे संवीक्षा किए जाने की तारीख को रिर्टनिंग आफिसर द्वारा अस्वीकृत कर दिया गया। याचिकाएं खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित—यह निर्वाचन अर्जी प्रारंभ में ही खारिज की जानी चाहिए क्योंकि इस अर्जी के और लंबित रहने से इस न्यायालय के समय की बरबादी ही होगी, अनाश्वयक लोक खर्चे होंगे और इस न्यायालय की कार्यवाही का लंबे समय तक दुरुपयोग होगा। (पैरा 26)

चूंकि यह निर्वाचन अर्जी तात्विक विशिष्टियों में त्रुटियुक्त है इसलिए इस अर्जी के चलने योग्य होने के प्रश्न का विनिश्चय करने के प्रयोजन के लिए उक्त कमी के प्रभाव पर विचार किए बिना, न्यायालय ने अर्जीदार को सुनवाई के प्रक्रम पर अनेक दस्तावेज फाइल करने के लिए अनुज्ञात किया था, जिनके अंतर्गत अभ्यर्थियों के नाम-निर्देशन पत्रों की प्रतियां और रिर्टनिंग आफिसर द्वारा की गई संवीक्षा कार्यवाहियों का अभिलेख भी शामिल था। अर्जीदार के नामनिर्देशन पत्र की क्रम सं० 60 है, जो रिर्टनिंग आफिसर को 24-6-1992 को 12.50 अपराह्न में स्वयं याची (मिथिलेश कुमार) द्वारा परिदत्त किया गया था। (पैरा 27)

रिर्टनिंग आफिसर द्वारा अर्जीदार के नामनिर्देशन पत्र की नामंजूरी के लिए दिए गए कारणों से यह दर्शित होता है कि प्रस्थापकों की अपेक्षित संख्या में कमी थी क्योंकि नामित प्रस्थापकों में से एक जवाहर प्रसाद सिंह ने अपने हस्ताक्षर नहीं किये थे। इसके अतिरिक्त, मिथिलेश कुमार का एक प्रस्थापक, सुरेन्द्र शर्मा, पहले ही राम जेठमलानी के नाम-निर्देशन पत्र पर समर्थक के रूप में हस्ताक्षर कर चुका था, जो मिथिलेश कुमार के नाम-निर्देशन पत्र के पहले फाइल किया गया था और इसलिए धारा 5-ख(5) के अनुसार उसके हस्ताक्षर निष्प्रभाव (अप्रवर्तनशील) हो गए थे। इसी प्रकार प्रेमनाथ जायसवाल, सरयूग मंडल, राजकुमार महासेठा, विनोद कुमार राय और मधु सिंह, जो मिथिलेश कुमार के समर्थक थे, पहले ही राम जेठमलानी के नाम-निर्देशन पत्र पर समर्थकों के रूप में हस्ताक्षर कर चुके थे, जो पहले ही फाइल किया जा चुका था और इस प्रकार उनके हस्ताक्षर भी मिथिलेश कुमार के नाम-निर्देशन पत्र पर निष्प्रभाव (अप्रवर्तशील) हो गए थे। इसलिए, अर्जीदार के नाम-निर्देशन पत्र की खारिजी के लिए कारण यह था कि उसमें धारा 5-ख(1) (क) की आज्ञापक अपेक्षाओं का पालन नहीं किया गया था, जिससे रिर्टनिंग आफिसर के लिए याची (मिथिलेश कुमार) के नाम-निर्देशन पत्र को धारा 5ङ(3) (ग) के अधीन संवीक्षा के समय खारिज करना आबद्धकर हो गया था। (पैरा 28)

उपधारा (1) में "परिदत्त" और "हस्ताक्षरित" शब्दों के अर्थ में अंतर स्पष्ट रूप से सामने लाया गया है और उसी संदर्भ में उपधारा(5) में प्रयुक्त इन शब्दों का वही अर्थ होगा। उपधारा (5) का स्पष्ट अर्थ यह है कि कोई भी निर्वाचक उसी निर्वाचन में एक से अधिक नाम-निर्देशन पत्र पर चाहे प्रस्थापक के रूप में या समर्थक के रूप में हस्ताक्षर नहीं कर सकता, और यदि वह ऐसा करता है या, दूसरे शब्दों में, यदि कोई निर्वाचक उसी निर्वाचन में एक से अधिक नाम-निर्देशन पत्र पर चाहे प्रस्थापक के रूप में या समर्थक के रूप में हस्ताक्षर करता है तो उसके उस नाम निर्देशन पत्र से भिन्न किसी नाम-निर्देशन पत्र पर हस्ताक्षर निष्प्रभाव होंगे, जो उपधारा (1) द्वारा यथा अपेक्षित रिर्टनिंग आफिसर को पहले परिदत्त किया गया है।

1992(9) eILR(PAT) SC 1

इसका अभिप्राय यह है कि कोई भी निर्वाचक चाहे प्रस्थापक के रूप में या समर्थक के रूप में उसी निर्वाचन में केवल एक ही नाम-निर्देशन पत्र पर हस्ताक्षर कर सकता है और जहां वह उसी निर्वाचन में उस नाम-निर्देशन पत्र के अलावा, जो रिटर्निंग आफिसर को प्रथम परिदत्त किया गया है, एक से अधिक नाम-निर्देशन पत्र पर हस्ताक्षर करता है वहां रिटर्निंग आफिसर को बाद में परिदत्त किसी नाम-निर्देशन पत्र पर उसके हस्ताक्षर निष्प्रभाव या प्रभावहीन होंगे। यह स्पष्ट है कि निर्वाचक को केवल एक ही अभ्यर्थी को प्रायोजित करने का अधिकार है और इसलिए केवल एक ही नाम-निर्देशन पत्र पर प्रस्थापक या समर्थक के रूप में हस्ताक्षर करने का अधिकार है, वह अधिकार उसी क्षण निःशेष हो जाता है, जब उसके द्वारा हस्ताक्षरित प्रथम नाम-निर्देशन पत्र रिटर्निंग आफिसर को परिदत्त कर दिया जाता है और रिटर्निंग आफिसर को तत्पश्चात् प्रदत्त किसी नाम-निर्देशन पत्र उसके हस्ताक्षर के प्रभावी होने का कोई प्रश्न उद्‌भूत नहीं होता। रिटर्निंग अधिकारी द्वारा उस प्रश्न की कोई जांच अनुध्यात नहीं है, जहां पर एक ही निर्वाचक द्वारा एक से अधिक हस्ताक्षरित नाम-निर्देशन पत्र रिटर्निंग अधिकारी को प्रदत्त किए गए हैं, क्योंकि कानून में यह उपबंध है कि (चूंकि) किसी निर्वाचक का किसी अभ्यर्थी को प्रस्थापित या समर्थित करने के अधिकार का केवल एक ही बार प्रयोग किया जा सकता है, अतः यह अधिकार उसी क्षण निःशेष हो जाता है, जब उसके द्वारा हस्ताक्षरित प्रथम नाम-निर्देशन पत्र रिटर्निंग अधिकारी को परिदत्त कर दिया जाता है। इस प्रकार 'परिदत्त' शब्द का उपधारा (5) में "हस्ताक्षरित" के रूप में अर्थान्वियन किए जाने की कोई गुंजाइश नहीं है, जैसा कि अर्जीदार (याची) द्वारा सुझाव दिया गया है क्योंकि इन दोनों शब्दों का अर्थ भिन्न है और वे केवल उपधारा (5) में ही नहीं, बल्कि उसी संदर्भ में धारा 5-ख की उपधारा (1) में भिन्न प्रयोजनों के लिए प्रयुयत किए गए हैं। धारा 5-ख की दोनों उपधाराओं में इन शब्दों का एक ही अर्थ होगा। इसलिए धारा 5-ख की उपधारा (5) का अर्जीदार द्वारा किया गया अर्थान्वियन अस्वीकार किया जाना चाहिए। (पैरा 30)

अर्जीदार द्वारा सुनवाई के समय किए गए स्पष्ट कथन को दृष्टिगत करते हुए (देखते हुए), जो उसके द्वारा फाइल किए गए दस्तावेजों से भी प्रकट होता है, कुछ सामान्य (उभयनिष्ठ) निर्वाचकों द्वारा हस्ताक्षरित, श्री राम जेठमलानी का नामनिर्देशन पत्र धारा 5 ख(1) (क) द्वारा यथाअपेक्षित रूप में रिटर्निंग आफिसर को पहले परिदत्त किया गया था और इसलिए, अर्जीदार के तत्पश्चात् परिदत्त किए गए नाम-निर्देशन पत्र पर उन्हीं निर्वाचकों के हस्ताक्षर धारा 5-ख(5) के कारण निष्प्रभाव थे। इसलिए इसका स्पष्ट परिणाम यह है कि तत्पश्चात् प्रदत्त किया गया अर्जीदार (मिथिलेश कुमार सिन्हा) का नाम-निर्देशन पत्र कम से कम 10 निर्वाचकों द्वारा प्रस्थापकों के रूप में और कम से कम 10 निर्वाचकों द्वारा समर्थकों के रूप में हस्ताक्षरित नहीं था, जैसा कि धारा 5-ख(1) (क) द्वारा अपेक्षित है, जिससे रिटर्निंग आफिसर का यह दायित्व हो गया था कि वह धारा 5-ङ(3) (ग) में अंतर्विष्ट आधार पर अर्जीदार के नाम-निर्देशन पत्र को खारिज कर देता। रिटर्निंग आफिसर द्वारा अर्जीदार के नाम-निर्देशन पत्र को खारिज करने के लिए यही कारण दिया गया है, जैसा कि धारा 5-ङ(7) द्वारा अपेक्षित है। यह मानते हुए भी, जैसा कि अर्जीदार द्वारा दावा किया गया है, कि उसका नाम-निर्देशन पत्र 10 निर्वाचकों द्वारा प्रस्थापकों के रूप में और 10 निर्वाचकों द्वारा समर्थकों के रूप में हस्ताक्षरित था, जिनके अंतर्गत निष्प्रभाव (अप्रवर्तनीय) सामान्य (उभयनिष्ठ) हस्ताक्षर भी थे और नाम-निर्देशन पत्र से प्रकट इस तथ्य को अनदेखी करते हुए भी

कि गिनती में एक हस्ताक्षर की कमी थी क्योंकि जवाहर प्रसाद सिंह ने जिसका प्रस्थापक के रूप में नाम था, नामनिर्देशन पत्र पर अपने हस्ताक्षर नहीं किए थे, यह निष्कर्ष अपरिहार्य है। (पैरा 31)

धारा 14-क की यह अपेक्षा कि राष्ट्रपतीय निर्वाचन को प्रश्नगत करने वाली निर्वाचन अर्जी ऐसे निर्वाचन के किसी अभ्यर्थी द्वारा या अर्जीदारों के रूप में संयोजित 20 या उससे अधिक निर्वाचकों द्वारा प्रस्तुत की जाएगी, इस स्पष्ट कारण के लिए है कि धारा 5-ख(क) के अनुसार किसी राष्ट्रपतीय निर्वाचन में किसी विधिमान्य नाम-निर्देशन के लिए अपेक्षा यह है कि किसी अभ्यर्थी का कम-से-कम 10 निर्वाचकों द्वारा प्रस्थापकों के रूप में और उतनी ही संख्या के निर्वाचकों द्वारा समर्थकों के रूप में, अर्थात् कम-से-कम कुल 20 निर्वाचकों द्वारा नाम-निर्देशन होना चाहिए। स्वयं को किसी निर्वाचन में सम्यक् रूप से नाम-निर्देशित अभ्यर्थी के रूप में दावा करने के हकदार व्यक्ति के पास उसके विधिमान्य नाम-दिर्देशन पत्र पर प्रस्थापकों और समर्थकों के रूप में हस्ताक्षर करने वाले कम-से-कम 20 निर्वाचक होने चाहिए। विधि का कभी ऐसा आशय नहीं हो सकता कि धारा 5-ख(1) (क) की अपेक्षाओं को पूरा किए बिना कोई भी व्यक्ति किसी निर्वाचन में अभ्यर्थी के रूप में सम्यक् रूप से नाम-निर्देशित होने का दावा कर सकता है, भले ही उसके पास उसे एक अभ्यर्थी के रूप में विधि-मान्य रूप से प्रायोजित करने के लिए प्रस्थापकों और समर्थकों के रूप में संयोजित 20 निर्वाचक न हों। यदि धारा 14-क के अनुसार कोई निर्वाचन अर्जी अर्जीदारों के रूप में संयोजित 20 से अन्यून निर्वाचकों द्वारा पेश नहीं की जा सकती तब उसे अर्जीदार के रूप में किसी अभ्यर्थी की आनुकल्पिक रीति द्वारा स्पष्टतः प्रस्तुत नहीं किया जा सकता, जिसे कम-से-कम 20 निर्वाचकों द्वारा विधिमान्य रूप से नाम-निर्देशित नहीं किया गया था। धारा 14-क(1) की यह अपेक्षा इस बात का स्पष्ट संकेत है कि ऐसा कोई व्यक्ति राष्ट्रपतीय निर्वाचन में स्वयं को एक अभ्यर्थी के रूप में सम्यक् रूप से नाम-निर्देशित होने का दावा नहीं कर सकता, जब तक कि उसने धारा 5-ख(1) (क) और धारा 5(ग) की आज्ञापक अपेक्षाओं का समाधान (को पूरा) नहीं कर दिया हो। (पैरा 32)

किसी निर्वाचन को प्रश्नगत करने के लिए कोई निर्वाचन अर्जी प्रस्तुत करने के लिए हकदार बनने हेतु अर्जीदार को ऐसे निर्वाचन में धारा 13-क के अर्थान्तर्गत एक 'अभ्यर्थी' होना चाहिए, जिसके लिए उसे 'अभ्यर्थी के रूप में सम्यक् रूप से नाम-निर्देशित' होना चाहिए और ऐसा दावा वह तब तक नहीं कर सकता, जब तक कि धारा 5-ख(1) (क) और धारा 5-ग की आज्ञापक अपेक्षाओं का उसके द्वारा पालन न कर दिया गया हो। जहां पर अविवादास्पद तथ्यों के आधार पर किसी विधिमान्य नाम-निर्देशन के लिए इन आज्ञापक अपेक्षाओं में किसी अपेक्षा का पालन नहीं किया गया था, वहां पर उक्त अर्जीदार धारा 13-क के अर्थान्तर्गत एक अभ्यर्थी नहीं था और इसलिए धारा 14-क के अनुसार वह अर्जी प्रस्तुत करने के लिए सक्षम नहीं था। (पैरा 33)

उच्चतम न्यायालय के विनिश्चयों द्वारा यह भी सुस्थिर है कि उक्त अधिनियम की धारा 14-क के अनुसार ऐसी कोई निर्वाचन अर्जी प्रस्तुत करने के लिए हकदार बनने हेतु धारा 13(क) के अर्थान्तर्गत एक अभ्यर्थी के रूप में अपेक्षित सुने जाने का अधिकार रखने के

लिए अर्जीदार को धारा 5-ख(1)(क) और धारा 5-ग के अनुसार एक अभ्यर्थी के रूप में सम्यक् रूप से नामनिर्देशित होना चाहिए। जब तक ऐसा नहीं है, तब तक अर्जीदार यह भी दावा नहीं कर सकता कि उसे उक्त निर्वाचन में एक अभ्यर्थी के रूप में सम्यक् रूप से नामनिर्देशित किया गया था, जैसा कि धारा 13(क) द्वारा अपेक्षित है। अर्जीदार (मिथिलेश कुमार सिन्हा) के नामनिर्देशन पत्र के संबंध में, उसके द्वारा अर्जी में वर्णित और सुनवाई के समय उसके द्वारा कथित तथ्यों से, जो उसके द्वारा फाइल किए गए दस्तावेजों से प्रकट हैं, उपर्युक्त निष्कर्ष से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि अर्जीदार, मिथिलेश कुमार सिन्हा को विजयी अभ्यर्थी डा० शंकर दयाल शर्मा के निर्वाचन को चुनौती देने का कोई कानूनी अधिकार नहीं है क्योंकि वह सुप्रीम/कोर्ट रूल्स के आदेश 39, नियम 7 के साथ पठित उक्त अधिनियम की धारा 14-क के अनुसार निर्वाचन अर्जी प्रस्तुत करने के लिए सक्षम नहीं है। अन्यथा भी उक्त अधिनियम की धारा 18(1)(ग) के अधीन उक्त निर्वाचन अर्जी में प्रार्थित उसके नामनिर्देशन पत्र की सदोष खारिजी का आधार उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर एक विचारणीय विवाद्यक को उद्भूत नहीं करता और उससे यही अपरिहार्य निष्कर्ष निकलता है। इस आधार की विद्यमानता का प्रथमदृष्ट्या मामला बनाने के लिए तात्त्विक तथ्यों की अभिवचनों में कमी है और स्वयं अर्जीदार के कथन द्वारा ही उनका पूर्णतः खंडन हो जाता है। (पैरा 34)

उच्चतम न्यायालय के पूर्ववर्ती विनिश्चयों ने अर्जीदार की इस दलील को भी स्पष्टतः नकार दिया है कि न्यायालय इस विचारण को जारी रखने के लिए बाध्य है, भले ही कोई विचारणीय विवाद्यक उद्भूत नहीं होता हो और उसे मात्र अधिनियम की धारा 17 के कारण अपेक्षित कानूनी अधिकार प्राप्त नहीं है। इसी अर्जीदार द्वारा फाइल किए गए एक मामले सहित, प्रोद्धृत मामलों से यह दर्शित होता है कि त्रुटियुक्त अर्जियों को आरंभ में ही खारिज कर दिया गया था। विचारण, निर्वाचन अर्जी के प्रस्तुत किए जाने के साथ ही, आरम्भ हो जाता है और इस प्रक्रम पर उक्त अर्जी की खारिजी का इस आधार पर किया गया आदेश कि उक्त अर्जी किसी विधि द्वारा वर्जित होने के कारण या कोई वाद हेतुक प्रकट न करने के कारण चलने योग्य नहीं है, विचारण के निष्कर्ष पर खारिजी का आदेश है, क्योंकि ऐसी किसी अर्जी के विचारण में आगे कोई कदम/कार्रवाई अनुध्यात नहीं है। अधिनियम की धारा 17 में "विचारण" शब्द को इसी रूप में समझना होगा, यदि धारा 17, आरम्भ में खारिजी सहित, सभी अर्जियों की खारिजी को लागू होनी है। यह मत सुप्रीम कोर्ट रूल्स के आदेश 23, नियम 6 से भी संगत है, जो आदेश 39 के नियम 34 के आधार पर लागू होता है, जैसा कि इस न्यायालय द्वारा अनेक बार अभिनिर्धारित किया गया है। (पैरा 39)

निर्वाचन-याचिका में अनेक अन्य बातें कही गई हैं किन्तु वे अधिनियम की धारा 18 में अंतर्विष्ट कोई अन्य आधार गठित करने या उठाने के लिए तात्त्विक तथ्यों के प्रकथन की कोटि में नहीं आती हैं। 'अनुचित प्रभाव' के प्रति एक सरसरी निर्देश याचिका में है किन्तु प्रकथनों से सामान्य मापदंड के अनुसार भी अभिवचनों की अध्यपेक्षा की पूर्ति नहीं होती, अधिनियम की धारा 18 की उपधारा (2) की कड़ी अध्यपेक्षाओं की पूर्ति का तो प्रश्न ही नहीं है। सुनवाई के दौरान भी याची ने मुख्यतः, रिटर्निंग आफिसर के समक्ष उसके द्वारा उठाए गए आक्षेपों का ही विशेष रूप से अवलंब लेते हुए, अन्य तीनों अभ्यर्थियों के नामनिर्देशन पत्रों की सदोष स्वीकृति की बाबत तर्क दिए। (पैरा 42)

याची का पक्षकथन, जैसा कि वह उसके अभिवचनों और तर्कों से प्रकट होता है, यह है कि अन्य तीनों अभ्यर्थियों के नामनिर्देशन पत्र गलत तौर पर स्वीकार किए गए, यद्यपि उनमें अभ्यर्थियों, उनके प्रस्थापकों और समर्थकों के अपूर्ण वर्णन (अंतर्विष्ट) थे। यह दलील नामनिर्देशन पत्रों की अंतर्वस्तुओं पर आधारित है। राष्ट्रपतीय और उपराष्ट्रपतीय निर्वाचन नियमावली, 1974 के नियम 4 के साथ पठित, प्ररूप 2 के प्रति निर्देश से सभी अभ्यर्थियों के नामनिर्देशन पत्रों के परिशीलन से यह दर्शित होता है कि इस याची सहित, चारों अभ्यर्थियों में से, जिनके नामनिर्देशन पत्र रिटर्निंग आफिसर द्वारा स्वीकार किए गए, किसी भी अभ्यर्थी के नामनिर्देशन पत्र में कोई त्रुटि, दोष या अस्पष्टता नहीं थी। इस याची के नामनिर्देशन पत्र की अंतर्वस्तुएं समान हैं। याची की शिकायत मुख्यतः प्ररूप 2 के स्तंभ 2 और 4 तक ही सीमित थी। स्तंभ 2 में प्रस्थापकों/समर्थकों के पूर्ण नाम के वर्णन की अपेक्षा की गई है और स्तंभ 4 में उस राज्य/संघ राज्य क्षेत्र के उल्लेख की अपेक्षा की गई है, जिसमें/जिससे वे निर्वाचित हुए थे। चारों अभ्यर्थियों के नामनिर्देशन पत्रों के परिशीलन मात्र से, जो रिटर्निंग आफिसर द्वारा स्वीकार किए गए थे, यह दर्शित होता है कि इन अध्यपेक्षाओं का सम्यक् रूप से अनुपालन किया गया था और इन नामनिर्देशन पत्रों में प्रस्थापकों और समर्थकों के नाम या किसी अन्य विहित विशिष्टि की बाबत कोई अस्पष्टता नहीं थी। याची ने यह दलील दी कि अभ्यर्थियों, प्रस्थापकों और समर्थकों के वर्णन में कुछ और विशिष्टियां दिए जाने की अपेक्षा की गई है। तथापि, याची द्वारा वर्णित कोई और विशिष्टि नामनिर्देशन पत्र के विहित प्ररूप या नियमों की अध्यपेक्षा नहीं है। इस प्रकार धारा 18(1)(ग) के अधीन इन नामनिर्देशन पत्रों में से किसी नामनिर्देशन पत्र की सदोष स्वीकृति का, प्रथम दृष्टया आधार भी साबित करने के लिए इन नामनिर्देशन पत्रों में से किसी नुक्स (त्रुटि) का न तो अभिवचन किया गया है और न वह दर्शित ही किया गया है, जिससे कि इस मुद्दे पर विचारणीय विवाद्यक उठाया जा सके। न्यायालय इस स्थल पर धारा 5(ङ) की उपधारा (5) के प्रति भी निर्देश करना उचित समझता है, जिसमें यह उपबंध किया गया है कि "रिटर्निंग आफिसर ऐसे किसी नुक्स के आधार पर कोई नामनिर्देशन पत्र अस्वीकार नहीं करेगा, जो सारभूत स्वरूप का नहीं है।" याची द्वारा नामनिर्देशन पत्र में किसी प्रकार के नुक्स का अभिवचन नहीं किया गया है और न वह दर्शित ही किया गया है (सारभूत स्वरूप के नुक्स का तो प्रश्न ही नहीं है) जिससे कि इस प्रश्न पर और आगे विचार या उक्त प्रयोजन के लिए विवाद्यक का विरचित किया जाना आवश्यक हो। अतः निर्वाचन याचिका से अधिनियम की धारा 18(1)(ग) में वर्णित आधार के विचारण के लिए कोई वाद-हेतुक प्रकट नहीं होता है। (पैरा 43)

वह एकमात्र अन्य आधार, जिसके प्रति याचिका में आकस्मिक निर्देश किया गया प्रतीत होता है और जिसके प्रति सुनवाई के दौरान सरसरी तौर पर निर्देश किया गया, धारा 18(1)(क) में अंतर्विष्ट आधार है, जिसे धारा 18(2) के साथ पढ़ा जाना है। आकस्मिक निर्देश अनुचित प्रभाव के आधार के संबंध में है। इस प्रक्रम पर याचिका के पैरा 2, 5 और 6 की अंतर्वस्तुओं के प्रति निर्देश करना उचित होगा, जिनका याची द्वारा अवलंब लिया गया और जिन्हें उसने अधिनियम की धारा 18 के अधीन आधार उठाने के लिए तात्त्विक प्रकथन माना है। न्यायालय धारा 18(1)(ग) से संबंधित आधार पर पहले ही विचार कर चुका है, जिससे याचिका का पैरा 2 सम्बद्ध है। पैरा 6(क) में अनेक उप-पैरा

हैं। उप-पैरा (1) में यह कहा गया है कि नामनिर्देशन पत्र केवल एक प्रस्थापक द्वारा प्रस्तुत किए गए थे, न कि 10 प्रस्थापकों द्वारा, और प्रस्थापकों तथा समर्थकों में प्रधान मंत्री, केंद्रीय मंत्री, मुख्य मंत्री और संसद्-सदस्य सम्मिलित थे। याची द्वारा यह दर्शित करने का कोई प्रयास नहीं किया गया कि यह बात अधिनियम की धारा 18(1) के अधीन आधार गठित करती है या वह किसी विधि के उल्लंघन या अननुपालन की कोटि में आती है। इसके अतिरिक्त, धारा 5-ख में, जिसमें नामनिर्देशन पत्र के प्रस्तुत किए जाने और विधिमान्य नामनिर्देशन की अध्यपेक्षाओं का उपबंध किया गया है, ऐसी कोई अध्यपेक्षा विहित नहीं की गई है। उपधारा (2) में यह कहा गया है कि अन्य तीनों अभ्यर्थियों की आयु 65 वर्ष से अधिक है। यह बात भी असंगत है और उसका अवलंब लेने का कोई प्रयास नहीं किया गया। इसी प्रकार उप-पैरा (3) और (4) भी असंगत हैं और याची ने अधिनियम की धारा 18 के अधीन आधार के रूप में सुनवाई के प्रक्रम पर उनका अवलंब लेने का कोई प्रयास नहीं किया। विधि में पूर्ण निर्वाचक नामावली फाइल करने की कोई अध्यपेक्षा नहीं है, सिवाय अधिनियम की धारा 5-ख(2) के अनुसार निर्वाचक नामावली में अभ्यर्थी से संबंधित प्रविष्टि की प्रमाणित प्रति के। संविधान के अनुच्छेद 58 के स्पष्टीकरण को देखते हुए, उप-पैरा (5) मिथ्या धारणा पर आधारित है। उप-पैरा (6) एकमात्र शेष उप-पैरा है, जिसमें धारा 18(1)(क) में अंतर्विष्ट आधार का अभिवचन करने का प्रयास किया गया है। अभ्यर्थियों द्वारा शपथ लेने की कोई अतिरिक्त अध्यपेक्षा नहीं है, जैसा कि इस न्यायालय के पूर्वतर विनिश्चयों द्वारा स्थापित किया जा चुका है और इसलिए उप-पैरा (6) के इस भाग पर और अधिक विचार करने की आवश्यकता नहीं है। शेष पैरा में यह प्रकथन किया गया है कि रिटर्निंग आफिसर, श्री सुदर्शन अग्रवाल को भारत के उप-राष्ट्रपति के रूप में डा० शंकर दयाल शर्मा, निर्वाचित अभ्यर्थी, द्वारा एक वर्ष का सेवावधि-विस्तार दिया गया था, जो "अवैध है और अनुचित प्रभाव (असम्यक् असर) की कोटि" में आता है। कुछ उपबंधों की सांविधानिक विधिमान्यता से संबंधित उप-पैरा (6) में किए गए प्रकथन का इस न्यायालय के पूर्वतर विनिश्चयों द्वारा समाधान हो जाता है और इसके अतिरिक्त वह निर्वाचन-याचिका की परिधि से परे भी है। इस बारे में कोई प्रकथन नहीं किया गया है कि श्री सुदर्शन अग्रवाल को दिया गया एक वर्ष का सेवावधि-विस्तार किस प्रकार अवैध है और अनुचित प्रभाव (असम्यक् असर) के प्राख्यान मात्र की विशिष्टियों का कोई उल्लेख तक नहीं किया गया है। धारा 18(2) को देखते हुए, धारा 18(1)(क) में अनुचित प्रभाव (असम्यक् असर) के अपराध का वही अर्थ है जो भारतीय दंड संहिता के अध्याय IX-क में दिया गया है। (पैरा 44)

भारतीय दंड संहिता की धारा 171-ग के परिशीलन मात्र से यह दर्शित होता है कि निर्वाचनों में असम्यक् असर के संघटक तत्व अनेक हैं और उन्हें अधिनियम की धारा 18(1)-(क) में असम्यक् असर के अपराध के अर्थ में पढ़ा जाना है। अधिनियम की धारा 18(1)(क) के अधीन आधार के अभिवाचित कहे जा सकने से पूर्व, जिसमें निर्वाचन-याचिका में विचारणीय विवाद्यक उठाया गया हो, यह अवश्य ही दर्शित किया जाना चाहिए कि असम्यक् असर के अपराध के संघटक तत्व गठित करने के लिए तात्त्विक तथ्य कम-से-कम निर्वाचन-याचिका में अभिवाचित किए गए हैं। याची ने इन अध्यपेक्षाओं का दिखावटी तौर पर भी पालन करने का कोई प्रयास नहीं किया है और उक्त आधार उठाते हुए, तात्त्विक तथ्यों का अभिवचन करने का कोई प्रयास किए बिना याचिका में केवल "निर्वाचन में असम्यक् असर" शब्दों

को दोहराना ही उचित समझा है। स्पष्टतः इस कारण याची ने सुनवाई के प्रक्रम पर किसी प्रकार की गंभीरता के बिना इस आधार का उल्लेख करने का भी कोई प्रयास नहीं किया। (पैरा 45)

यह स्पष्ट है कि यद्यपि 1992 की निर्वाचन-याचिका सं० 2 में याची काका जोगिन्दर सिंह को उच्चतम न्यायालय नियमावली के आदेश 39, नियम 7 के साथ पठित, अधिनियम की धारा 14-क द्वारा यथापेक्षित, याचिका प्रस्तुत करने का अधिकार प्राप्त है, तथापि उन तात्त्विक तथ्यों और आधारों का, जिनके आधार पर निर्वाचित अभ्यर्थी के निर्वाचन को शून्य घोषित किए जाने के अनुतोष की ईप्सा की गई है, अभिवचन नहीं किया गया है, जिससे कोई वाद-हेतु प्रकट हो या कोई विचारणीय विवाद्यक उद्भूत हो। अतः शुद्ध परिणाम वही है, जो 1992 की निर्वाचन-याचिका सं० 1 का था और प्रारंभिक आक्षेप को कायम रखते हुए, यह याचिका भी खारिज किए जाने योग्य है। यह अभिनिर्धारित किया ही जाना चाहिए कि निर्वाचन-याचिका में कोई वाद-हेतुक प्रकट नहीं होता है और इसलिए वह उच्चतम न्यायालय नियमावली के आदेश 39 के नियम 34 के साथ पठित, आदेश 39 के नियम 2 और 5 तथा आदेश 23 के नियम 6 और राष्ट्रपतीय और उप-राष्ट्रपतीय निर्वाचन अधिनियम, 1952 के आज्ञापक उपबंधों के आधार पर खारिज किए जाने योग्य है। (पैरा 46)

इन दोनों याचिकाओं में संगत चीजों को असंगत चीजों से छांट कर अलग करने का कार्य बहुत उबाऊ (कठिन) रहा है। 1992 की निर्वाचन-याचिका सं० 1 में याची (मिथिलेश कुमार सिन्हा) के अड़ियल रवैये और निष्क्रियता के कारण यह कार्य और भी अधिक कठिन रहा है, जो सुनवाई की समाप्ति पर निर्णय सुनाए जाने के लिए मामले को समाप्त किए जाने के पश्चात् भी कुछ और लिखित निवेदन प्रस्तुत करके अपने तर्क जारी रखने के लिए अड़े रहे। जो कुछ उन्होंने पहले कहा था, उसके अतिरिक्त उसमें कोई भी बात तात्त्विक या उपयोगी नहीं थी। लिखित निवेदनों में कुछ स्थानों पर याची (मिथिलेश कुमार सिन्हा) द्वारा प्रयुक्त भाषा भी अशिष्ट थी। यह बात संदिग्ध है कि उन्होंने ऐसा जानबूझकर किया या अनजाने में किया किंतु न्यायालय की यह धारणा है कि उनके सभी कार्य जानबूझकर किए गए हैं। न्यायालय याची (मिथिलेश कुमार सिन्हा) के इस दृष्टिकोण और आचरण की जोरदार शब्दों में निन्दा करता है, जिन्होंने स्वयं-याची के रूप में उन्हें न्यायालय द्वारा अनुदत्त अनुग्रह का स्पष्ट रूप से दुरुपयोग किया है। सामान्यतया न्यायालय निर्णय में ऐसा नहीं कहता, किंतु न्यायालय ऐसा इसलिए कह रहा है कि सुनवाई के दौरान उन्हें न्यायालय द्वारा प्रदत्त संकेत का वांछित प्रभाव नहीं हुआ है। (पैरा 47)

अब समय आ गया है कि उच्चतम न्यायालय के पांच न्यायाधीशों के न्यायपीठ द्वारा सुनवाई की अपेक्षा करते हुए, अशिष्टतापूर्ण रीति में फाइल की गई ऐसी तुच्छ याचिकाओं को विचारार्थ ग्रहण करने से रोकने के लिए समुचित उपबंध किए जाएं। ऐसी तुच्छ याचिकाओं से एकमात्र जिस उद्देश्य की पूर्ति होती है, वह है याची का कुछ अनुचित प्रचार, जो ऐसी याचिका के फाइल किए जाने का एकमात्र प्रयोजन प्रतीत होता है। स्पष्टतः इस प्रयोजन के लिए मंच (फोरम) के रूप में न्यायालय का उपयोग अनुज्ञात नहीं किया जाना चाहिए। संसद् और राज्य विधान मण्डलों के लिए निर्वाचनों को चुनौती देने वाली लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम के अधीन निर्वाचन-याचिकाओं की उच्च न्यायालय के एक एकल

न्यायाधीश द्वारा सुनवाई अपेक्षित होती है। राष्ट्रपतीय और उप-राष्ट्रपतीय निर्वाचनों के गुरुतर महत्व को देखते हुए, ऐसी निर्वाचन-याचिकाओं के विचारण के लिए फोरम (न्यायालय) उच्चतम न्यायालय है और उक्त न्यायालय द्वारा विरचित नियमों के अनुसार इन याचिकाओं की पांच न्यायाधीशों के न्यायपीठ द्वारा सुनवाई की जाती है। अनुभव से यह दर्शित होता है कि ऐसी याचिकाओं से संलग्न पवित्रता और महत्व को उस अशिष्टतापूर्ण रीति ने ढोंग बना कर रख दिया है, जिसमें इस उपचार का अवलंब लिया जाता है। मात्र इस तथ्य से कि इन दोनों याचिकाओं की संपूर्ण परिधि पूर्णतः इस न्यायालय के अनेक पूर्वतर विनिश्चयों के अंतर्गत आती है, जिनमें से कुछ में यही याची पक्षकार थे, यह दर्शित होता है कि विद्यमान उपबंध विधि की प्रक्रिया (कार्यवाही) के ऐसे दुरुपयोग को रोकने के लिए अपर्याप्त हैं। अब ऐसी तुच्छ याचिकाओं की छानबीन करने के लिए उपबंधों में समुचित संशोधन आवश्यक हो गया है और विचारणीय विवाद्यक विरचित करके इस न्यायालय के पांच न्यायाधीशों के न्यायपीठ द्वारा केवल गंभीर याचिकाओं के विचारण का उपबंध आवश्यक है। इस दिशा में समुचित कार्रवाई की अपेक्षा करते हुए, इस अनुभूत आवश्यकता के प्रति सभी संबंधित लोगों का ध्यान आकर्षित करने के लिए यह मत व्यक्त किया जा रहा है। (पैरा 56)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[1988]	[1988] 3 उम० नि० प० 633= [1988] 1 एस० सी० आर० 525 : **मिथिलेश कुमार बनाम श्री आर० वेंकटरामन् और अन्य;**	37
[1984]	[1984] 2 उम० नि० प० 833=[1984] 2 एस० सी० आर० 61 : **चरणलाल साहू और अन्य बनाम ज्ञानी जैल सिंह और एक अन्य;**	36
[1978]	[1978] 3 उम० नि० प० 1=[1978] 3 एस० सी० आर० 1 : **चरण लाल साहू बनाम नीलम संजीव रेड्डी;**	35
[1976]	[1976] 2 उम० नि० प० 118=[1971] 2 एस० सी० आर० 197 : **शिव कृपाल सिंह बनाम श्री वी० वी० गिरि;**	52
[1975]	ए० आई० आर० 1975 एस० सी० 1288 : **चरण लाल साहू बनाम श्री फखरुद्दीन अली अहमद और अन्य;**	38
[1968]	[1968] 2 एस० सी० आर० 133 : **श्री बाबू राव पटेल और अन्य बनाम डा० जाकिर हुसैन और अन्य,**	52

आरंभिक अधिकारिता : 1992 की निर्वाचन याचिका (अर्जी) संख्या 1 और 2.

संविधान के अनुच्छेद 71 के अधीन याचिकाएं।

याचियों की ओर से	स्वयं
प्रत्यर्थियों की ओर से	सर्वश्री जी० रामस्वामी, महान्यायवादी, कपिल सिब्बल, ज्येष्ठ अधिवक्ता, डा० ए० एम० सिंघवी, सुशील कुमार जैन, ए० पी० धमीजा, सुधांशु आत्रेय, रंजीत कुमार, अनिल श्रीवास्तव और सुश्री ए० सुभाषिणी (एन० पी०)

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति जे० एस० वर्मा ने दिया।

न्या० वर्मा—राष्ट्रपतीय और उपराष्ट्रपतीय निर्वाचन अधिनियम, 1952 (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'अधिनियम' कहा गया है) की धारा 14 के अधीन ये दोनों निर्वाचन याचिकाएं (अर्जी) डाक्टर शंकर दयाल शर्मा के भारत के नौवें राष्ट्रपति के पद पर निर्वाचन को आक्षेप करते हुए फाइल की गई हैं। रिटर्निंग आफिसर द्वारा नामांकन पत्रों की तारीख 25 जून, 1992 को की गई संवीक्षा के आधार पर केवल चार व्यक्तियों, अर्थात् डाक्टर शंकर दयाल शर्मा, प्रो० जी० जी० स्वैल, श्री राम जेठमलानी, और काका जोगिंदर सिंह उर्फ धरती पकड़, के नामांकन पत्र विधिमान्य पाए गये और तदनुसार ग्रहण (स्वीकार) किए गए थे। मतदान तारीख 13 जुलाई, 1992 को हुआ और निर्वाचन का परिणाम तारीख 16 जुलाई, 1992 को घोषित किया गया, जिसमें डा० शंकर दयाल शर्मा को निर्वाचित घोषित किया गया, और उन्हें तारीख 25 जुलाई, 1992 को भारत के नौवे राष्ट्रपति के पद पर शपथ दिलायी गई। 1992 की निर्वाचन याचिका संख्या 1, में याची मिथिलेश कुमार सिन्हा ने निर्वाचन में अपना नामांकन पत्र फाइल किया था, किंतु एक विधिमान्य नामांकन के लिए आज्ञापक अपेक्षाओं के अननुपालन के कारण उसे संवीक्षा किए जाने की तारीख को रिर्टनिंग आफिसर द्वारा अस्वीकृत कर दिया गया।

2. इन दोनों निर्वाचन याचिकाओं में निर्वाचित अभ्यर्थी डाक्टर शंकर दयाल शर्मा की ओर से और भारत के महान्यायवादी द्वारा उठायी गयीं कतिपय आरंभिक आपत्तियां आरंभ में ही विनिश्चय किए जाने की अपेक्षा करती हैं। 1992 की निर्वाचन याचिका संख्या 1 में उठायी गई आरंभिक आपत्ति का सार यह है कि यह मुख्य रूप से इस आधार पर पोषणीय (चलने योग्य) न होने के रूप में नामंजूर किए जाने योग्य है कि यह एक सक्षम व्यक्ति, अर्थात् अधिनियम की धारा 13(क) और उच्चतम न्यायालय नियम, 1966 के आदेश XXXIX नियम 7 के साथ पठित, धारा 14-क द्वारा यथा अपेक्षित 'ऐसे निर्वाचन में किसी अभ्यर्थी' द्वारा प्रस्तुत नहीं की गई है और आनुकल्पिक रूप से इस आधार पर भी कि यह इस घोषणा के लिए कोई वाद हेतुक प्रकट नहीं करती कि निर्वाचित अभ्यर्थी का निर्वाचन शून्य है। 1992 की निर्वाचन याचिका संख्या 2 की पोषणीयता पर आरंभिक आपत्ति यह है कि यद्यपि यह उक्त निर्वाचन के एक अभ्यर्थी द्वारा प्रस्तुत की गई है, तो भी यह किसी

1992(9) eILR(PAT) SC 1

विचारणीय विवाद्यक को नहीं उठाती है क्योंकि यह इस घोषणा के लिए कोई वादहेतुक प्रक नहीं करती है कि निर्वाचित अभ्यर्थी का निर्वाचन अधिनियम की धारा 18 में अंतर्विष्ट अनुज्ञेय आधारों में से किसी आधार पर शून्य है।

3. अब हम इन निर्वाचन याचिकाओं में प्रत्येक से संबंधित तात्विक तथ्यों के प्रति निर्देश करेंगे।

4. 1992 की निर्वाचन याचिका संख्या 1 :

याची मिथिलेश कुमार सिन्हा ने यह अभिकथन किया है कि उसने भारत के राष्ट्रपति के पद पर निर्वाचन को लड़ने के लिए तारीख 30 मार्च, 1992 और तारीख 28 मई, 1992 के मध्य बीस विधायकों के हस्ताक्षर प्राप्त किए थे और अपना नामांकन पत्र तारीख 24 जून, 1992 को फाइल किया था। तथापि रिटर्निंग आफिसर द्वारा तारीख 25 जून, 1992 को नामांकन पत्रों की संवीक्षा किए जाने पर, मिथिलेश कुमार सिन्हा का नामांकन पत्र इस आधार पर अस्वीकृत कर दिया गया कि उस पर धारा 5-ख(1) (क) द्वारा यथा-अपेक्षित, कम-से-कम 10 निर्वाचकों द्वारा प्रस्थापकों के रूप में और 10 निर्वाचकों द्वारा समर्थकों के रूप में हस्ताक्षर नहीं किए गए थे, और यह भी कि उनमें से कुछ हस्ताक्षर एक अन्य अभ्यर्थी श्री राम जेठमलानी के एक नामांकन पत्र में भी, जो नामांकन पत्र रिटर्निंग आफिसर को पहले दिया गया था, सम्मिलित होने के कारण धारा 5-ख (5) के अनुसार अप्रवर्तनीय (निष्प्रभाव) थे। तद्नुसार रिटर्निंग आफिसर द्वारा अधिनियम की धारा 5(ङ) (3) (ग) के अधीन मिथिलेश कुमार सिन्हा का नामांकन-पत्र अस्वीकृत कर दिया गया। याची ने दलील दी है कि उसके नामांकन पत्र को अस्वीकृत करना गलत था, जो इस घोषणा के लिए धारा 18(1) (ग) के अधीन एक आधार है कि निर्वाचित अभ्यर्थी का निर्वाचन शून्य है।

5. याचिका में किए गए प्रकथन अति विस्तृत (लंबे) और अस्पष्ट हैं और याचिका की कुछ अंतर्वस्तुएं असंगत और तुच्छ हैं। तथापि, हमने याचिका की सुनवाई पर, याची से उसका सही आधार, अभिनिश्चित किया। उसने इंगित किया कि वह अधिनियम की धारा 13(क) के अर्थांतर्गत एक 'अभ्यर्थी' था, क्योंकि उसका नामांकनपत्र प्रस्थापकों और समर्थकों की अपेक्षित संख्या द्वारा हस्ताक्षरित किया गया था और इसलिए, उसका नामांकन पत्र गलत तौर से अस्वीकार किया गया था। उसका दावा है कि धारा 5-ख (5) उस नामांकन-पत्र को विधिमान्य मानती है, जिस पर प्रस्थापक/समर्थक पहले अपने हस्ताक्षर करते हैं, न कि उसे जो रिटर्निंग आफिसर को पहले परिदत्त किया गया हो। याची के अनुसार, उसके प्रस्थापकों और समर्थकों ने, जो श्री राम जेठमलानी के एक नामांकन पत्र में भी सम्मिलित (सामान्य) थे, याची के नामांकन पत्र पर समय की दृष्टि से पहले हस्ताक्षर किए थे और इसलिए, रिटर्निंग आफिसर को तारीख 24 जून, 1992 को श्री राम जेठमलानी के नामांकन पत्र के, याची के नामांकन पत्र के परिदान से पहले दिए जाने का, याची के नामांकन पत्र पर समान हस्ताक्षरों को अप्रवर्तनीय करने का प्रभाव नहीं है। इस निर्वाचन याचिका में सारतः याची का यही पक्षकथन है।

6. हम याचिका के कुछ भागों को भी उद्धृत कर सकते हैं, जिनका अवलंब लेते हुए याची ने यह दलील दी है कि निर्वाचन याचिका को चलाने की याची की सक्षमता को इंगित करने के साथ-साथ विचारणीय विवाद्यक उठाने के लिए उसके द्वारा अपेक्षित अभिवचन किए गए हैं। याचिका की शब्दशः प्रस्तुति निम्न प्रकार है—

"याची का अधिकार

मैं राष्ट्रपतीय और उप-राष्ट्रपतीय निर्वाचन अधिनियम, 1952 की धारा 13(क) में यथा-परिभाषित एक 'अभ्यर्थी' हूं क्योंकि—

(क) मैंने अपनी अभ्यर्थिता घोषित की है और 1992 में होने वाले राष्ट्रपतीय निर्वाचन के लिए तारीख 29-5-1992, 9-6-1992 और 17-6-1992 के तीन पत्रकार सम्मेलनों में घोषणापत्र जारी किया है।

(ख) मैंने अपना नामांकन पत्र रिटर्निंग आफिसर (प्रत्यर्थी संख्या 1) के समक्ष तारीख 24-6-1992 को संबंधित (सहबद्ध) और अपेक्षित कागजपत्रों और दो हजार पांच सौ रुपए केवल (2500 रु०) की प्रतिभूति के साथ फाइल किया है।

(3) याचिका प्रस्तुत करने से संबंधित संक्षिप्त तथ्य—

(क) 1992 में निर्वाचन के लिए मैंने अपने नामांकन पत्र पर अपेक्षित संख्या में हस्ताक्षर प्राप्त किए और पटना और दिल्ली में पत्रकार सम्मेलनों में अपनी अभ्यर्थिता घोषित की।

× × ×

(घ) मैंने नामांकन पत्र, उसके समर्थन में शपथपत्र, संवीक्षा के दौरान प्रयुक्त किए जाने वाले आक्षेप (आपत्ति) और अन्य संबंधित कागज-पत्रों को संलग्न करते हुए, एक अग्रेषण पत्र भी उन्हें प्रस्तुत किया था।

(ङ) मेरे द्वारा तारीख 24-6-1987 और तारीख 19-6-1992 के मध्य अर्जित की गई प्रतिष्ठा और उपर्युक्त तथ्य मेरे विरोधियों की आंख का कांटा बन गए, जिन्होंने रिटर्निंग आफिसर (प्रत्यर्थी संख्या 1) को प्रभावित किया, जिन्होंने अधिनियम की धारा 5-ख(5) पर आश्रित धारा 5-ङ(3)(ग) के आधार पर, जो मुझे लागू नहीं होती हैं मेरे 'नामांकन' को नामंजूर कर दिया।

× × ×

(4) वाद हेतुक—

(क) प्रत्यर्थी संख्या 1 के विरुद्ध—

प्रत्यर्थीसंख्या 1, प्रत्यर्थी संख्या 3, 4 और 5 से प्रभावित है। उन्होंने राष्ट्रपतीय और उपराष्ट्रपतीय निर्वाचन अधिनियम की धारा 5-ख(5) पर

आश्रित धारा 5-ङ, (3)(ग) जो मुझ पर लागू नहीं होती है, के आधार पर मेरे नामांकनों को नामंजूर किया ।

× × ×

(ग) प्रत्यर्थी संख्या 3 के विरुद्ध—

(i) उन्होंने राज्य सभा के महा सचिव, जो 1992 के राष्ट्रपतीय निर्वाचन के लिए रिटर्निंग आफिसर है, को 'येन केन प्रकारेण' मेरा नामांकन नामंजूर करने को प्रभावित करने के लिए, राज्य सभा के अपने अध्यक्ष पद का दुरुपयोग किया ।

(ii) उन्होंने, तारीख 19-6-92 के मेरे पत्र को 'रद्दी की टोकरी में फेंकने के लिए भी रिटर्निंग आफिसर को प्रभावित किया ।

(iii) उन्होंने, प्रस्थापकों और समर्थकों के हस्ताक्षरों की शुद्धता के समर्थन में 'शपथपत्र' फाइल नहीं किया ।"

× × ×

"7. अधिनियम की धारा 5-ख(5) के सही अर्थ के लिए तर्क—

(क) इस धारा का अभिप्राय नितांत स्पष्ट है ।

(ख) यह निर्वाचनों पर एक आज्ञापक नियंत्रण करता है ।

(ग) इस आज्ञा का अतिक्रमण करने पर दंड स्वरूप, निर्वाचक का द्वितीय हस्ताक्षर अप्रवर्तनीय होगा ।

(घ) शब्द 'डिलीवर्ड' को 'सबस्क्राइब्ड' के रूप में पढ़ा जाना चाहिए ।

(ङ) 'डिलीवर्ड' के लिए हिन्दी अनुवाद में तत्समान शब्द 'प्रदत्त' है, जिससे 'सबस्क्राइब्ड' (हस्ताक्षरित) अभिप्रेत है । 'परिदत्त' जैसा कोई शब्द नहीं है ।

(च) 'डिलीवर्ड' शब्द 'सिगनेचर' (हस्ताक्षर) से संबंधित है और 'कागज पत्र' से संबंधित नहीं है ।

(8) विनिश्चय किए जाने वाले विवाद्यक—

(क) क्या रिटर्निंग आफिसर ने राष्ट्रपतीय और उपराष्ट्रपतीय निर्वाचन अधिनियम की धारा 5-ख (5) का गलत अर्थ समझा है ।

(ख) क्या मिथिलेश कुमार का नामांकन अधिनियम की धारा 5-ङ (3) (ग) के अधीन विधिमान्य है ।

(ग) क्या अधिनियम की धारा 5-ख (5), मिथिलेश कुमार को लागू होती है ।"

1992(9) eILR(PAT) SC 1

"12. **अधिनियम की धारा 18 से आधार**—

(क) निर्वाचित अभ्यर्थी (प्रत्यर्थी संख्या 3) ने गलत विनिश्चय/आदेशों को करने के लिए रिटर्निंग आफिसर को असम्यक् रूप से प्रभावित किया है।

(ख) राष्ट्रपतीय और उपराष्ट्रपतीय निर्वाचन अधिनियम की धारा 5-ङ (3) (घ) के अननुपालन द्वारा निर्वाचन का परिणामतात्विक रूप से प्रभावित हुआ है।

(ग) श्री जी० जी० स्वैल, श्री राम जेठमलानी और श्री काका जोगिंदर सिंह 'धरती पकड़' के नामांकन गलत तौर से ग्रहण (स्वीकार) किए गए थे।

(घ) मिथिलेश कुमार (याची) का नामांकन गलत तौर से नामंजूर किया गया था।

(ङ) निर्वाचित अभ्यर्थी डाक्टर शंकर दयाल शर्मा का नामांकन गलत तौर से ग्रहण (स्वीकार) किया गया है।"

"14. **अनुतोष के लिए प्रार्थना**—

अतः माननीय न्यायाधीश से निम्न अनुतोषों के लिए प्रार्थना की जाती है—

(क) कृपया निर्वाचित अभ्यर्थी का निर्वाचन शून्य घोषित किया जाए।

(ख) कृपया मिथिलेश कुमार को सम्यक् रूप से निर्वाचित घोषित किया जाए।"

7. याची ने उसके द्वारा फाइल की गई तारीखों की सूची में एक प्रविष्टि का भी अवलंब लिया, जिसमें उसने निम्न प्रकार कथन किया है—

"तारीख 30-3-1992 से तारीख 28-5-1992	मैंने 1992 में राष्ट्रपतीय निर्वाचन के लिए बीस विधायकों के हस्ताक्षर प्राप्त किए थे।"

8. प्रारंभिक आक्षेप (आपत्ति) यह है कि याची के अधिनियम की धारा 13(क) में यथा-परिभाषित 'अभ्यर्थी' न होने के कारण, वह अधिनियम की धारा 14-क द्वारा यथा-अपेक्षित निर्वाचन याचिका को प्रस्तुत करने में सक्षम नहीं है। अनुकल्पी आपत्ति यह है कि यह धारणा भी करते हुए कि याची 'अभ्यर्थी' की परिभाषा का समाधान करता है, और इसलिए, निर्वाचन याचिका को प्रस्तुत करने को सक्षम है, याचिका में धारा 18(1) (ग) के अधीन उसके नामांकन पत्र को गलत तौर से नामंजूर करने या धारा 18(1) (क) के अधीन अनुचित प्रभाव (असम्यक् असर) के आधार, से संबंधित कोई विचारणीय विवाद्यक उठाने के लिए कोई प्रकथन नहीं किए गए हैं। याचिका के शेष भाग असंगत हैं, क्योंकि अन्य आधार, उक्त आधारों के लिए अपेक्षित आधार की व्यवस्था करने के लिए किन्हीं तात्विक तथ्यों का अभिवचन किए बिना ही वर्णित किए गए हैं। सुनवाई के दौरान भी याची ने केवल

धारा 18(1) (ग) के अधीन अपने नामांकन पत्र को गलत तौर से नामंजूर करने के आधार की दलील दी ।

9. निर्वाचित अभ्यर्थी डाक्टर शंकर दयाल शर्मा की ओर से हाजिर होते हुए, विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री कपिल सिब्बल और भारत के महान्यायवादी ने दलील दी कि याचिका को उच्चतम न्यायालय नियम, 1966 (सुप्रीम कोर्ट रूल्स 1966) के आदेश 23, नियम 6 के साथ पठित, आदेश 39, नियम 2, 5, 7, और 34 के अधीन नामंजूर कर दिया जाना चाहिए, क्योंकि उसमें किसी वाद हेतुक को प्रकट नहीं किया गया है और वह अधिनियम के उपबंधों द्वारा वर्जित है ।

1992 की निर्वाचन याचिका संख्या 2—

(10) याची काका जोगिंदर सिंह उर्फ धरतीपकड़ निर्वाचन में सम्यक् रूप से नामनिर्दिष्ट किए गए अभ्यर्थियों में से एक था । यह याचिका भी समान रूप से बेढंगे तौर पर प्रारूपित की गई है । सुनवाई के दौरान, सुसंगत तात्विक भाग, याची से अभिनिश्चित किए गए थे और वे शब्दशः नीचे उद्धृत किए जा रहे हैं—

"2. नामांकन पत्रों की संवीक्षा तारीख 25 जून, 1992 को हुई । राष्ट्रपतीय निर्वाचन 1992 के लिए रिटर्निंग आफिसर ने अन्य अभ्यर्थियों के नामांकन पत्रों को नामंजूर किया और डाक्टर शंकर दयाल शर्मा, प्रोफेसर जी० जी० स्वैल और श्री राम जेठमलानी, प्रत्यर्थियों, के चार नामांकन पत्रों, उपाबंध III, को याचियों और अन्य अभ्यर्थियों द्वारा उठाई गई अनेक आपत्तियों और उपाबंध II के बावजूद बिना कोई कारण दिए अवैध रूप से और असंवैधानिक रूप से ग्रहण (स्वीकार) किया ।"

"5. याची 1952 के राष्ट्रपतीय और उपराष्ट्रपतीय निर्वाचन अधिनियम (संख्या 31) (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'अधिनियम' कहा गया है) की धारा 18(1) (2) और 19 में वर्णित आधारों पर धारा 16 के खंड (क) और (ख) के अधीन अनुतोष का दावा करता है ।"

"6. याची ने उक्त आधारों के समर्थन में जिन तथ्यों का अवलंब लिया है, वे निम्न पैरा में वर्णित किए गए हैं—

(क) नामांकन पत्रों की संवीक्षा तारीख 25 जून, 1992 को हुई । रिटर्निंग आफिसर ने संवीक्षा के दौरान कोई विस्तृत आदेश नहीं लिखा और उसने केवल यह घोषित किया कि कुछ अभ्यर्थियों के नामांकन नामंजूर किए गए या ग्रहण किए गए । याची ने सभी तीनों प्रत्यर्थियों के नामांकनों, उपाबंध III, के विरुद्ध निम्न आधारों पर लिखित आपत्तियां उठायीं—

(1) यह कि सभी नामांकन पत्र प्रत्यर्थी सं० 1 और 2 के एक ही प्रस्थापक द्वारा प्रस्तुत किए गए हैं, न कि 10 प्रस्थापकों द्वारा । इसके अतिरिक्त, ये प्रधानमंत्री और केंद्रीय मंत्रियों, द्वारा प्रस्थापित और समर्थित किए गए हैं ।

(2) सभी प्रत्यर्थी 65 वर्ष की आयु से अधिक हैं और इस प्रकार राष्ट्रपति के कृत्यों का निर्वहन अधिनियम, 1969 (डिस्चार्ज आफ फंक्शन आफ प्रेसीडेंट ऐक्ट, 1969) के अनुच्छेद 70 के अधीन, वे राष्ट्रपति के पद के लिए पात्र नहीं हैं क्योंकि भारत के मुख्य न्यायाधिपति की आयु 65 वर्ष नियत (निश्चित) की गई हैं और यदि वह भारत के राष्ट्रपति के रूप में कार्य कर रहा है और वह 65 वर्ष की आयु को प्राप्त कर लेता है, तो वह राष्ट्रपति के पद को रिक्त करने के लिए आबद्ध है।

(3) संसद सदस्य वेतन और भत्ता अधिनियम, 1954 के उपबंधों के अधीन, प्रत्यर्थी संख्या 1, भारत के संविधान के अनुच्छेद 58(3) के अधीन लाभ के पद पर है और प्रस्थापक, विभिन्न कानूनों के अनुसार लोक सेवक हैं, इसलिए वे निर्वाचित अभ्यर्थी के नामांकनपत्रों की प्रस्थापना या समर्थन नहीं कर सकते हैं।

(4) सभी प्रत्यर्थियों ने विधियों के उपबंधों के अधीन यथापेक्षित निर्वाचक नामावली की संपूर्ण प्रति फाइल नहीं की है (**रंजीत सिंह बनाम प्रीतम सिंह**[1])।

(5) उपराष्ट्रपति के रूप में लोक सेवक होने के कारण डाक्टर शंकर दयाल शर्मा, भारत के संविधान के अनुच्छेद 58(2) के अधीन लाभ के पद पर हैं।

(6) सभी प्रत्यर्थियों ने संविधान के अनुच्छेद 79 के साथ पठित अनुच्छेद 58(ग) और 84(क) के अधीन कोई शपथ नहीं ली है। अंतः रिटर्निंग आफिसर श्री सुदर्शन अग्रवाल की नियुक्ति, जिनकी सेवा अवधि को डाक्टर शंकर दयाल शर्मा द्वारा तारीख 1-7-1992 से 1 वर्ष के लिए बढ़ा दिया गया है, अवैध है, और यह निर्वाचन में अनुचित प्रभाव गठित करती है, इसलिए निर्वाचित अभ्यर्थी का निर्वाचन शून्य घोषित किए जाने योग्य है। संविधान का अनुच्छेद 71(3) संसद को, भारत के राष्ट्रपति के पद पर निर्वाचन से संबंधित विषयों को विधि द्वारा विनियमित करने के लिए प्राधिकृत करता है। इस प्रकार केवल संसद् के निर्वाचनों को विनियमित करने के लिए कोई विधि बना सकती थी, किंतु अनुच्छेद 58 के प्रतिकूल कोई अहर्ताएं अधिरोपित नहीं की जा सकती हैं। अधिनियम की धारा 21(3) के अधीन नियम बनाने की शक्ति संसद को है और वह निर्वाचन आयोग और केंद्रीय सरकार में निहित नहीं है। इस प्रकार राष्ट्रपतीय और उपराष्ट्रपतीय निर्वाचन नियम, 1974 को संसद के दोनों सदनों द्वारा पारित नहीं किया गया है और राष्ट्रपति द्वारा अनुमति नहीं दी गई है। यह विधि, न्याय और कंपनी कार्य मंत्रालय (विधायी विभाग) की तारीख 21 मई, 1974 की अधिसूचना संख्या एस० ओ० 305(ङ) द्वारा प्रकाशित की गई है। (देखिए भारत का राजपत्र, असाधारण, भाग II धारा 3 (ii)। इस प्रकार यह अधिनियम की धारा 21(3) के साथ-साथ, संविधान के अनुच्छेद 58, 71(3) के प्रतिकूल है और, इसलिए यह शून्य और असंवैधानिक है। अनुच्छेद 84 और 102 के अधीन अहर्ताएं और निरर्हताएं वर्णित की गई हैं किंतु अनुच्छेद

[1] ए० आई० आर० 1966 एस० सी० 1626

58 के अधीन केवल राष्ट्रपतीय अभ्यर्थियों की अर्हताएं वर्णित की गई हैं, इस प्रकार यह स्पष्ट है कि संविधान के अनुच्छेद 58 के अधीन कोई निरर्हता नहीं है, जैसा कि संविधान के अनुच्छेद 102 के अधीन संसद के सदस्यों के लिए उसका (निरर्हता का) वर्णन किया गया है।"

"**प्रार्थना**

याची न्याय की मांग करता है, इसलिए मामले की परिस्थितियों में याची अत्यंत आदर के साथ निम्न प्रार्थनाएं करता है—

(1) यह कि संविधान (ग्यारहवां संशोधन) अधिनियम, 1961, दल-बदल निरोध अधिनियम और दल सचेतक को भारत के संविधान के अनुच्छेद 14, 38 के अधीन अधिकारातीत घोषित किया जाना चाहिए।

(2) राष्ट्रपतीय और उपराष्ट्रपतीय निर्वाचन अधिनियम, 1952 (संशोधित) की धाराओं 5(ख)(6) और 5(ग), 21(3) के साथ निर्वाचन नियम, 1974 को भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 और 58 के अधीन अवैध, शून्य और असंवैधानिक घोषित किया जाना चाहिए।

(3) प्रधानमंत्री और अन्य मंत्रियों और अन्य मंत्रियों मुख्य मंत्रियों के पद लोक सेवकों के पद हैं जैसा कि इस विद्वान् न्यायालय के 7 न्यायधीशों द्वारा **आर० एस० नायक** बनाम **ए०आर० अंतुले**[1] वाले मामले में विनिश्चय किया गया था और वे लाभ के पद घोषित किए जाने चाहिए, और इसलिए उन्होंने निर्वाचित अभ्यर्थी के निर्वाचन में अनुचित प्रभाव कारित किया है, इसलिए निर्वाचित अभ्यर्थी के निर्वाचन को शून्य घोषित किया जाना चाहिए।

(4) निर्वाचित अभ्यर्थी, प्रत्यर्थी के निर्वाचन को अधिनियम की धारा 18 के अधीन शून्य घोषित किया जाना चाहिए, जैसा कि याचिका में कथन किया गया है।

(5) राष्ट्रपति के कृत्यों का निर्वहन अधिनियम, 1969 को भारत के संविधान के अनुच्छेदों 145, 71, 60, 52 और 53 के अधिकारातीत घोषित किया जाना चाहिए।

(6) यह कि राष्ट्रपति के निर्वाचन की पूर्वोक्त पद्धति गलत और असंवैधानिक है, इसलिए वह भविष्य में सभी निर्वाचकों द्वारा सीधे तौर से किया जाना चाहिए और भारत संघ को भारत के संविधान के अनुच्छेद 54, 55 और 66 में संशोधन का निदेश किया जाना चाहिए, क्योंकि मतों को मूल्य जनसंख्या के आधार पर विनिश्चित किया जाता है और सांसदों के वोटों का मूल्य सभी राज्यों के विधायकों के मूल्य से भिन्न होता है, इसलिए यह विभेदकारी है और संविधान के अनुच्छेद 14 और 38 का अतिक्रमण करती है।

---

1 [1984] 4 उम० नि० प० 375=ए० आई० आर० 1984, सी० सी० 991.

(7) मंत्रियों के संबलमों और भत्तों से संबंधित अधिनियम, 1952 (1952 की अधिनियम संख्या 58) की धाराओं 4(1)(2), 5, 6, 7 और 11 के साथ संसद् सदस्य वेतन और भत्ता अधिनियम 1954 की धाराओं 3, 4, 5, 6, 7, 8 और 9 को शून्य और असंवैधानिक घोषित किया जाना चाहिए।

(8) निर्वाचित अभ्यर्थी डाक्टर शंकर दयाल शर्मा के राष्ट्रपति पद पर निर्वाचन को, पूर्वोक्त प्रार्थनाओं को दृष्टिगत करते हुए, शून्य घोषित किया जाना चाहिए और याची को भारत के राष्ट्रपति के पद पर निर्वाचित घोषित किया जाए।

(9) डाक्टर शंकर दयाल शर्मा, प्रोफेसर जी० जी० स्वैल और राम जेठमलानी के नामांकन पत्रों को रिटर्निंग आफिसर द्वारा गलत तौर से ग्रहण किया गया है, इसलिए पूर्वोक्त सभी अभ्यर्थियों के नामांकन पत्रों को अवैध और शून्य घोषित किया जाए और याची काका जोगिंदर सिंह धरती पकड़ पुत्र सरदार हजूर सिंह, निवासी बरेली को राष्ट्रपति पद पर निर्वाचित अभ्यर्थी घोषित किया जाना चाहिए।

11. याचिका के पैरा 2 में प्रकथन, अन्य तीन अभ्यर्थियों के नामांकन पत्रों को गलत तौर से ग्रहण करने से संबंधित हैं और उपाबंध II के साथ पढ़े जाने चाहिए, जो याची द्वारा रिटर्निंग आफिसर को अन्य अभ्यर्थियों के नामांकन पर उसकी आपत्तियों को अंतर्विष्ट करने वाला तारीख 25-6-92 का एक पत्र और याची द्वारा मुख्य निर्वाचन आयुक्त को यह शिकायत करते हुए लिखा गया तारीख 2-7-92 का एक पत्र है कि रिटर्निंग आफिसर ने अन्य अभ्यर्थियों के नामांकन पत्रों को राजनैतिक दबाव के अधीन ग्रहण करते हुए, याची की तारीख 25-6-92 को की गई आपत्तियों पर कोई आदेश पारित नहीं किया। याची द्वारा तारीख 25-6-92 के अपने पत्र द्वारा अन्य तीन अभ्यर्थियों के नामांकन पत्रों पर उठाई गई आपत्तियां ये थीं—(1) उनमें संसदीय निर्वाचन क्षेत्रों के सही नाम वर्णित नहीं किए गए थे; (2) प्रस्थापकों और समर्थकों ने भी अपने-अपने निर्वाचन क्षेत्रों के, जहां से वे निर्वाचित हुए थे, सही नाम और संख्याएं नहीं दी थीं; (3) उनके नामांकन पत्रों के प्ररूप में स्तंभ (कालम) संख्या 4 में की गई प्रविष्टियों में त्रुटि थी, और (4) प्ररूप में निर्वाचक मंडल की संख्या का वर्णन करते हुए, कोई स्तंभ विहित नहीं किया गया है; तथापि निर्वाचक मंडल की संस्थाएं प्ररूप संख्या 2 में वर्णित की गई हैं, जो विधि के विरुद्ध हैं। डाक्टर शंकर दयाल शर्मा, प्रोफेसर जी० जी० स्वैल और श्री राम जेठमलानी के नामांकन पत्रों में यही वे त्रुटियां थीं, जो याची द्वारा उठाई गई आपत्तियों में वर्णित की गईं।

12. हमें याचिका के शेष भागों के प्रति निर्देश करने की आवश्यकता नहीं है, जिनमें किसी तथ्य का अभिवचन नहीं किया गया है, जिससे कि अधिनियम की धारा 18 या 19 के अधीन कोई आधार उठाया जा सके।

13. निर्वाचित अभ्यर्थी डाक्टर शंकर दयाल शर्मा की ओर से श्री कपिल सिब्बल और भारत के विद्वान् महान्यायवादी द्वारा भी उठाई गई प्रारंभिक आपत्ति यह है कि यह याचिका उच्चतम न्यायालय नियम, 1966 के आदेश 23 नियम 6 के साथ पठित आदेश 39, नियम 2, 5 और 34 के अधीन भी नामंजूर किए जाने के लिए दायी है, क्योंकि यह कोई वादहेतुक को प्रकट नहीं करती और न ही किसी विचारणीय विवाद्यक को उठाती

है। इस याचिका में याची की एक 'अभ्यर्थी' के रूप में निर्वाचन याचिका फाइल करने की सक्षमता विवादित नहीं है।

14. अब हम इन याचिकाओं के चलने योग्य होने पर उठाई गई प्रारंभिक आपत्तियों पर विचार करने से पूर्व कुछ तात्विक उपबंधों के प्रति निर्देश करेंगे।

15. भारत के संविधान के अनुच्छेद 54 में यह उपबंध किया गया है कि संसद के दोनों सदनों के निर्वाचित सदस्य और राज्यों की विधान सभाओं के निर्वाचित सदस्य भारत के राष्ट्रपति के निर्वाचन के लिए निर्वाचकगण को गठित करेंगे। अनुच्छेद 56 में यह विहित किया गया है कि राष्ट्रपति अपने पदग्रहण की तारीख से पांच वर्ष की अवधि तक पद धारण करेगा। राष्ट्रपति निर्वाचित होने के लिए अर्हताएं अनुच्छेद 58 में निम्न प्रकार निहित की गई हैं:—

"58. राष्ट्रपति निर्वाचित होने के लिए अर्हताऐं:—

(1) कोई व्यक्ति राष्ट्रपति निर्वाचित होने का पात्र तभी होगा जब वह—

(क) भारत का नागरिक हो,

(ख) पैंतीस वर्ष की आयु पूरी कर चुका हो, और

(ग) लोक सभा का सदस्य निर्वाचित होने के लिए अर्हित हो।

(2) कोई व्यक्ति जो भारत सरकार के या किसी राज्य की सरकार के अधीन अथवा उक्त सरकारों में से किसी के नियंत्रण में किसी स्थानीय या अन्य प्राधिकारी के अधीन कोई लाभ का पद धारण करता है, राष्ट्रपति निर्वाचित होने का पात्र नहीं होगा।

स्पष्टीकरण—इस अनुच्छेद के प्रयोजनों के लिए, कोई व्यक्ति केवल इसीलिए कोई लाभ का पद धारण करने वाला नहीं समझा जाएगा कि वह संघ का राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति या किसी राज्य का राज्यपाल है अथवा संघ का या किसी राज्य का मंत्री है।"

16. अनुच्छेद 71 में राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति के निर्वाचन से संबंधित या संसक्त विषयों का उपबंध किया गया है और वह निम्न प्रकार है—

"71. **राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति के निर्वाचन से संबंधित या संसक्त विषय**—

(1) राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति के निर्वाचन से उत्पन्न या संसक्त सभी शंकाओं और विवादों की जांच और विनिश्चय उच्चतम न्यायालय द्वारा किया जाएगा और उसका विनिश्चय अंतिम होगा।

(2) यदि उच्चतम न्यायालय द्वारा किसी व्यक्ति के राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति के रूप में निर्वाचन को शून्य घोषित कर दिया जाता है तो उसके द्वारा, यथास्थिति, राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति के पद की शक्तियों के प्रयोग और कर्त्तव्यों के पालन में

उच्चतम न्यायालय के विनिश्चय की तारीख को या उससे पहले किए गए कार्य उस घोषणा के कारण अविधिमान्य नहीं होंगे ।

(3) इस संविधान के उपबंधों के अधीन रहते हुए, राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति के निर्वाचन से संबंधित या संसक्त विषय का विनियमन संसद विधि द्वारा कर सकेगी ।

(4) राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति के रूप में किसी व्यक्ति के निर्वाचन को उसे निर्वाचित करने वाले निर्वाचकगण के सदस्यों में किसी भी कारण से विद्यमान किसी रिक्त के आधार पर प्रश्नगत नहीं किया जाएगा ।"

17. राष्ट्रपतीय और उपराष्ट्रपतीय निर्वाचन अधिनियम, 1952 (1952 का अधिनियम संख्या 31) संसद द्वारा अनुच्छेद 71(3) के अधीन अधिनियमित किया गया है । हमारे प्रयोजन के लिए अधिनियम के तात्विक उपबंध निम्नलिखित हैं—

5 क. कोई भी व्यक्ति जो राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति के पद के लिए निर्वाचित होने के लिए संविधान के अधीन अर्हित है, उस पद के निर्वाचन के लिए अभ्यर्थी के रूप में नामनिर्दिष्ट किया जा सकेगा ।

5 ख. (1) धारा 4 की उपधारा (1) के खंड (क) के अधीन नियत की गई तारीख को या उसके पूर्व, प्रत्येक अभ्यर्थी, या तो स्वयं या अपने प्रस्थापकों अथवा समर्थकों में से किसी के द्वारा, रिटर्निंग आफिसर को, धारा 5 के अधीन जारी की गई लोक सूचना में विनिर्दिष्ट स्थान पर, पूर्वाह्न ग्यारह बजे और अपराह्न तीन बजे के बीच, विहित प्ररूप में भरा गया नामनिर्देशन पत्र परिदत्त करेगा जिस पर अभ्यर्थी के नामनिर्देशन की अनुमति देते हुए हस्ताक्षर होंगे तथा,

(क) राष्ट्रपतीय निर्वाचन की दशा में, कम से कम दस निर्वाचकों के प्रस्थापकों के रूप में और कम से कम दस निर्वाचकों के समर्थकों के रूप में भी हस्ताक्षर होंगे,

(ख) उपराष्ट्रपतीय निर्वाचन की दशा में, कम से कम पांच निर्वाचकों के प्रस्थापकों के रूप में और कम से कम पांच निर्वाचकों के समर्थकों के रूप में भी हस्ताक्षर होंगे :—

परन्तु कोई भी नामनिर्दिष्ट पत्र रिटर्निंग आफिसर को किसी ऐसे दिन प्रस्तुत नहीं किया जाएगा जो लोक अवकाश दिन है ।

(2) प्रत्येक नामनिर्देशन पत्र के साथ उस संसदीय निर्वाचन-क्षेत्र की, जिसमें अभ्यर्थी निर्वाचक के रूप में रजिस्ट्रीकृत है, निर्वाचक नामावली में अभ्यर्थी से संबंधित प्रविष्टि की एक प्रमाणित प्रति होगी ।

(3) रिटर्निंग आफिसर किसी ऐसे नामनिर्देशन पत्र को स्वीकार नहीं करेगा

जो किसी दिन पूर्वाह्न ग्यारह बजे से पहले और अपराह्न तीन बजे के पश्चात् प्रस्तुत किया जाए।

(4) जो नामनिर्देशन पत्र धारा 4 की उपधारा (1) के खंड (क) के अधीन नियत की गई अंतिम तारीख को अपराह्न तीन बजे के पहले प्राप्त नहीं होता है या जिसके साथ इस धारा की उपधारा (2) में निर्दिष्ट प्रमाणित प्रति संलग्न नहीं है, वह नामंजूर कर दिया जाएगा और ऐसी नामंजूरी से संबंधित एक संक्षिप्त टिप्पण उस नामनिर्देशन पत्र पर ही अभिलिखित किया जाएगा।

(5) कोई निर्वाचन उसी निर्वाचक में, चाहे प्रस्थापक के रूप में या समर्थक के रूप में, एक से अधिक नामनिर्देशन पत्र पर हस्ताक्षर नहीं करेगा और यदि वह एक से अधिक नामनिर्देशन पत्र पर हस्ताक्षर करता है तो प्रथम परिदत्त नामनिर्देशन पत्र से भिन्न किसी भी नामनिर्देशन पत्र पर उसका हस्ताक्षर निष्प्रभाव होगा।

(6) इस धारा की कोई बात किसी अभ्यर्थी के एक ही निर्वाचन के लिए एक से अधिक नामनिर्देशन पत्रों द्वारा नामनिर्दिष्ट किए जाने को नहीं रोकेगी :

परन्तु किसी अभ्यर्थी द्वारा या उसकी ओर से चार से अधिक नामनिर्देशन पत्र प्रस्तुत नहीं किए जाएंगे या रिटर्निंग आफिसर द्वारा स्वीकार नहीं किए जाएंगे।

5-ग. (1) किसी अभ्यर्थी को निर्वाचन के लिए तब तक सम्यक्तः नामनिर्दिष्ट नहीं समझा जाएगा, जब तक वह दो हजार पांच सौ रुपए की राशि निक्षिप्त नहीं करता या करवाता है :

परंतु जहां एक ही निर्वाचन में कोई अभ्यर्थी एक से अधिक नामनिर्देशन पत्रों द्वारा नामनिर्दिष्ट किया गया है, वहां इस उपधारा के अधीन उससे एक से अधिक निक्षेप की अपेक्षा नहीं की जाएगी।

× × ×

5-घ. नामनिर्देशन पत्र प्रस्तुत किए जाने पर रिटर्निंग आफिसर :—

(क) उसमें नामनिर्देशन पत्र प्रस्तुत किए जाने की तारीख और समय का कथन अपने हस्तलेख से प्रमाणित करेगा तथा उस पर उसका क्रम संख्यांक दर्ज करेगा;

(ख) नामनिर्देशन पत्र प्रस्तुत करने वाले व्यक्ति या व्यक्तियों को नामनिर्देशनों की संवीक्षा के लिए नियत की गई तारीख, समय और स्थान की सूचना देगा; तथा

(ग) खंड (क) के अधीन यथाप्रमाणित और संख्यांकित नामनिर्देशन पत्र की एक प्रति अपने कार्यालय में किसी सहजदृश्य स्थान पर लगवाएगा।

5-ङ. (1) धारा 4 की उपधारा (1) के अधीन नामनिर्देशनों की संवीक्षा के

लिए नियत तारीख को हर अभ्यर्थी, प्रत्येक अभ्यर्थी का एक प्रस्थापक या एक समर्थक तथा प्रत्येक अभ्यर्थी द्वारा लिखित रूप से सम्यक्तः प्राधिकृत एक अन्य व्यक्ति, नामनिर्देशनों की संवीक्षा के समय उपस्थित रहने का हकदार होगा, किंतु अन्य कोई व्यक्ति नहीं, और रिटर्निंग आफिसर उन्हें सब अभ्यर्थियों के नामनिर्देशन पत्रों की, जो धारा 5-ख की उपधारा (4) के अधीन नामंजूर नहीं कर दिए गए हैं, परीक्षा करने के लिए सब उचित सुविधाएं देगा ।

(2) शंकाओं को दूर करने के लिए इसके द्वारा यह घोषित किया जाता है कि नामनिर्देशनों की संवीक्षा के लिए नियत तारीख को उन नामनिर्देशन पत्रों की संवीक्षा करना आवश्यक नहीं होगा, जो धारा 5-ख की उपधारा (4) के अधीन पहले ही नामंजूर किए गए हैं ।

(3) तत्पश्चात् रिटर्निंग आफिसर नामनिर्देशन पत्रों की परीक्षा करेगा और ऐसे सब आक्षेपों का विनिश्चय करेगा जो किसी नामनिर्देशन पत्र पर किए जाएं तथा, या तो ऐसे किसी आक्षेप पर या स्वप्रेरणा से, ऐसे किसी संक्षिप्त जांच के पश्चात्, यदि कोई हो, जिसे वह आवश्यक समझे, किंसी नामनिर्देशन को निम्नलिखित आधारों में से किसी पर नामंजूर कर सकेगा, अर्थात् :—

(क) यह कि नामनिर्देशनों की संवीक्षा के लिए नियत की गई तारीख को अभ्यर्थी संविधान के अधीन, यथास्थिति, राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति के पद के लिए निर्वाचन का पात्र नहीं है; अथवा

(ख) किसी भी प्रस्थापकों या समर्थकों में से कोई धारा 5-ख की उपधारा (1) के अधीन नामनिर्देशन पत्र पर हस्ताक्षर करने के लिए अर्हित नहीं है; अथवा

(ग) यह कि नामनिर्देशन पत्र पर उतने प्रस्थापकों या समर्थकों ने हस्ताक्षर नहीं किए हैं, जितने अपेक्षित हैं; अथवा

(घ) यह कि अभ्यर्थी के या प्रस्थापकों अथवा समर्थकों में से किसी के हस्ताक्षर असली नहीं हैं या कपट द्वारा लिए गए हैं; अथवा

(ङ) यह कि धारा 5-ख या धारा 5-ग के उपबंधों में से किसी का अनुपालन नहीं किया गया है ।

(4) उपधारा (3) के खंड (ख) से (ङ) तक की किसी बात से यह नहीं समझा जाएगा कि वह किसी अभ्यर्थी के नामनिर्देशन को नामनिर्देशन पत्र की बाबत किसी अनियमितता के आधार पर नामंजूर करने के लिए प्राधिकृत करती है, यदि अभ्यर्थी किसी अन्य नामनिर्देशन पत्र द्वारा, जिसकी बाबत कोई अनियमितता नहीं हुई है, सम्यक् रूप से नामनिर्दिष्ट कर दिया गया है ।

(5) रिटर्निंग आफिसर किसी नामनिर्देशन पत्र को किसी ऐसी त्रुटि के आधार पर नामंजूर नहीं करेगा, जो महत्वपूर्ण नहीं है ।

(6) रिटर्निंग आफिसर धारा 4 की उपधारा (1) के खंड (ख) के अधीन संवीक्षा के लिए नियत तारीख को संवीक्षा करेगा और कार्यवाहियों का स्थगन अनुज्ञात तभी करेगा, जब ऐसी कार्यवाहियों में बलवे या खुली आम हिंसा द्वारा या उसके नियंत्रण से बाहर के कारणों द्वारा विघ्न या बाधा डाली जाती है अन्यथा नहीं :

परन्तु यदि रिटर्निंग आफिसर द्वारा या किसी अन्य व्यक्ति द्वारा कोई आक्षेप किया जाता है तो संबद्ध अभ्यर्थी को उसका खंडन करने के लिए, संवीक्षा के लिए नियत तारीख से एक दिन छोड़कर अगले दिन से अनधिक समय अनुज्ञात किया जाएगा, तथा रिटर्निंग आफिसर उस तारीख को अपना विनिश्चय अभिलिखित करेगा जिसके लिए कार्यवाहियां स्थगित की गई हैं।

(7) रिटर्निंग आफिसर प्रत्येक नामनिर्देशन पत्र पर उसे स्वीकार या नामंजूर करने का अपना विनिश्चय पृष्ठांकित करेगा और यदि नामनिर्देशन पत्र नामंजूर कर दिया जाता है, तो ऐसी नामंजूरी के कारणों का एक संक्षिप्त कथन अभिलिखित करेगा।

(8) तत्समय प्रवृत्त निर्वाचक नामावली में प्रविष्टि की प्रमाणित प्रति इस धारा के प्रयोजनों के लिए, तब तक इस तथ्य का निश्चायक साक्ष्य होगी कि उस प्रविष्टि में निर्दिष्ट व्यक्ति उस निर्वाचन-क्षेत्र के लिए निर्वाचक है, जब तक कि यह साबित न हो जाए कि वह लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1950 की धारा 16 में वर्णित निरर्हताओं में से किसी से ग्रस्त है।"

× × ×"

"13. इस भाग में जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो—

(क) "अभ्यर्थी" से वह व्यक्ति अभिप्रेत है, जो निर्वाचन में अभ्यर्थी के रूप में सम्यकतः नामनिर्दिष्ट होने का दावा करता है;

(ख) "खर्चे" से निर्वाचन अर्जी के विचारण के या उससे आनुषंगिक सभी खर्चे, प्रभार और व्यय अभिप्रेत हैं;

(ग) "निर्वाचित अभ्यर्थी" से वह अभ्यर्थी अभिप्रेत है जिसका नाम सम्यकतः निर्वाचित रूप में धारा 12 के अधीन प्रकाशित किया गया है।

14. (1) कोई भी निर्वाचन उपधारा (2) में विनिर्दिष्ट प्राधिकरण को पेश की गई निर्वाचन अर्जी द्वारा ही प्रश्नगत किया जाएगा, अन्यथा नहीं।

(2) उच्चतम न्यायालय निर्वाचन अर्जी का विचारण करने की अधिकारिता रखने वाला प्राधिकरण होगा।

(3) हर निर्वाचन अर्जी ऐसे प्राधिकरण को उस भाग के उपबंधों और उच्चतम न्यायालय द्वारा अनुच्छेद 145 के अधीन बनाए गए नियमों के अनुसार पेश की जाएगी।

1992(9) eILR(PAT) SC 1

14-क. (1) निर्वाचन को प्रश्नगत करने वाली अर्जी धारा 18 की उपधारा (1) में और धारा 19 में विनिर्दिष्ट (आधारों) में से एक या अधिक आधारों पर ऐसे निर्वाचन के किसी अभ्यर्थी द्वारा, या—

(i) राष्ट्रपतीय निर्वाचन की दशा में बीस या अधिक निर्वाचकों द्वारा संयुक्त अर्जीदारों के रूप में;

(ii) उपराष्ट्रपतीय निर्वाचन की दशा में दस या अधिक निर्वाचकों द्वारा संयुक्त अर्जीदारों के रूप में,

उच्चतम न्यायालय में पेश की जा सकेगी।

(2) ऐसी कोई अर्जी उस घोषणा के, जिसमें धारा 12 के अधीन निर्वाचन में निर्वाचित अभ्यर्थी का नाम हो, प्रकाशन की तारीख के पश्चात् किसी भी समय पेश की जा सकेगी किंतु ऐसे प्रकाशन की तारीख से तीस दिनों के पश्चात् पेश नहीं की जा सकेगी।

15. इस भाग के उपबंधों के अध्यधीन रहते हुए यह है कि उच्चतम न्यायालय द्वारा अनुच्छेद 145 के अधीन बनाए गए नियम चाहे वे राष्ट्रपतीय और उप-राष्ट्रपतीय निर्वाचन (संशोधन) अधिनियम, 1977 के प्रारंभ के पूर्व या पश्चात् बनाए गए हों निर्वाचन अर्जियों के प्ररूप का, उस रीति का, जिसमें उन्हें पेश किया जाना है, उन व्यक्तियों का, जो इसके पक्षकार बनाए जाने हैं, उससे संबंधित अपनाई जाने वाली प्रक्रिया का और उन परिस्थितियों का विनियमन कर सकेंगे जिनमें अर्जियों का शमन हो जाएगा या जिनमें वे वापस ली जा सकेंगी और जिनमें नए अर्जीदार प्रतिस्थापित किए जा सकेंगे और वे खर्चे के लिए प्रतिभूति दिए जाने की अपेक्षा कर सकेंगे।

16. अर्जीदार निम्नलिखित घोषणाओं में से किसी घोषणा का दावा कर सकेगा, अर्थात्—

(क) निर्वाचित अभ्यर्थी का निर्वाचन शून्य है;

(ख) निर्वाचित अभ्यर्थी का निर्वाचन शून्य है और वह स्वयं या कोई अन्य अभ्यर्थी सम्यक् रूप से निर्वाचित हुआ है।"

"18. (1) यदि उच्चतम न्यायालय की यह राय है कि—

(क) निर्वाचित अभ्यर्थी या निर्वाचित अभ्यर्थी की सहमति से किसी अन्य व्यक्ति द्वारा निर्वाचन में रिश्वत या असम्यक् असर का अपराध किया गया है, अथवा

(ख) निर्वाचन का परिणाम पर—

(i) किसी मत के अनुचित तौर पर लिए जाने या इंकार किए जाने के कारण, अथवा

(ii) संविधान के या इस अधिनियम के या इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों या किए गए आदेशों के उपबंधों का अनुपालन न किए जाने से, अथवा

(iii) इस तथ्य के कारण कि किसी ऐसे अभ्यर्थी का (निर्वाचित अभ्यर्थी से भिन्न) नामनिर्देशन, जिसने अपनी अभ्यर्थिता वापस नहीं ली है, गलत रूप में स्वीकार किया गया है, तात्त्विक रूप से प्रभाव पड़ा है, अथवा

(ग) किसी अभ्यर्थी का नामनिर्देशन गलत रूप से इंकार किया गया है या निर्वाचित अभ्यर्थी का नामनिर्देशन गलत रूप से स्वीकार किया गया है;

तो उच्चतम न्यायालय यह घोषणा करेगा कि निर्वाचित अभ्यर्थी का निर्वाचन शून्य है।

(2) इस धारा के प्रयोजनों के लिए निर्वाचन में रिश्वत और असम्यक् असर के अपराध के वही अर्थ हैं जो भारतीय दंड संहिता के अध्याय 9-क में हैं।

"19. यदि किसी व्यक्ति ने, जिसने निर्वाचन अर्जी पेश की है, निर्वाचित अभ्यर्थी के निर्वाचन को प्रश्नगत करने के अतिरिक्त इस घोषणा के लिए दावा किया है कि वह स्वयं या कोई अन्य अभ्यर्थी सम्यक् रूप से निर्वाचित हुआ है और उच्चतम न्यायालय की यह राय है कि वास्तव में अर्जीदार या ऐसे अन्य अभ्यर्थी ने विधिमान्य मतों में से अधिसंख्य (बहुसंख्यक) मत प्राप्त किए हैं तो उच्चतम न्यायालय निर्वाचित अभ्यर्थी का निर्वाचन शून्य घोषित करने के पश्चात्, यथास्थिति, अर्जीदार या ऐसे अन्य अभ्यर्थी को सम्यक् रूप से निर्वाचित घोषित करेगा :

परंतु यदि यह साबित हो जाता है कि ऐसे अभ्यर्थी का निर्वाचन उस दशा में शून्य होता जिसमें वह निर्वाचित अभ्यर्थी रहता और उसके निर्वाचन को प्रश्नगत करने वाली अर्जी पेश की गई होती तो ऐसे अर्जीदार या अन्य अभ्यर्थी को सम्यक रूप से निर्वाचित घोषित नहीं किया जाएगा।"

18. उच्चतम न्यायालय नियम 1966 के भाग VII में आदेश XXXIX अंतर्विष्ट है, जो (नियम) "राष्ट्रपतीय और उपराष्ट्रपतीय निर्वाचन अधिनियम 1952 के भाग III" के अधीन निर्वाचन याचिकाओं से संबंधित विरचित नियम हैं। हमारे प्रयोजन के लिए आदेश XXXIX में सुसंगत नियम, नियम सं० 2, 5, 7, 8, 11, 20 और 34 हैं, जो निम्न प्रकार हैं :—

*"नियम 2 : किसी निर्वाचन को केवल ऐसी याचिका द्वारा प्रश्नगत किया जाएगा, जो इस आदेश के उपबंधों के अनुसार तैयार और प्रस्तुत की जाएगी।"

---

*अंग्रेजी में यह इस प्रकार है—

"2. An application calling in question an election shall only be by a petition made and presented in accordance with the provisions of this order."

"नियम 5 : याचिका, अधिनियम के अधीन याची के न्यायालय को याचिका फाइल करने के अधिकार का वर्णन करेगी और उसके द्वारा दावा किए गए अनुतोषों को प्राप्त (सिद्ध) करने के लिए उसके द्वारा अवलम्ब लिए गए तथ्यों और आधारों का संक्षेप में वर्णन करेगी।"

"नियम 7 : किसी निर्वाचन को प्रश्नगत करने वाली याचिका, अधिनियम की धारा 18 की उपधारा (1) और धारा 19 में विनिर्दिष्ट एक या अधिक आधारों पर, उक्त निर्वाचन में किसी अभ्यर्थी द्वारा, या

(i) राष्ट्रपतीय निर्वाचन के मामले, याचियों के रूप में संयोजित बीस या अधिक निर्वाचकों द्वारा प्रस्तुत की जा सकेगी;

(ii) × × ×

8. जहां याची अधिनियम की धारा 16 के खंड (क) के अधीन घोषणा का दावा करता है, वह निर्वाचित अभ्यर्थी को प्रत्यर्थी के रूप में पक्षकार बनाएगा, और जहां वह उक्त धारा के खंड (ख) के अधीन एक घोषणा का दावा करता है, वहां वह, स्वयं को छोड़कर, निर्वाचन में सम्यक् रूप से नामनिर्देशित सभी अभ्यर्थियों को प्रत्यर्थियों के रूप में पक्षकार बनाएगा।"

"11. याची, याचिका के साथ, याचिका की और उससे संलग्न सभी दस्तावेजों की कम से कम बारह प्रतियां भी फाइल करेगा।"

"5. The petition shall state the right of the petitioner under the Act to petition the court and briefly set forth the facts and grounds relied on by him to sustain the reliefs claimed by him."

"7. A petition calling in question an election may be presented on one or more of the grounds specified in sub-section (1) of section 18 and section 19 of the Act, by any candidate at such election, or

(i) in the case of Presidential election, by twenty or more electors joined together as petitioners;

(ii) × × ×

8. Where the petitioner claims a declaration under clause (a) of section 16 of the Act, he shall implead the returned candidate as the respondent, and where he claims a declaration under clause (b) of the said section, he shall implead as respondents all candidates, other than himself, duly nominated at the election."

"11. The petitioner shall also lodge along with the petition, at least twelve copies of the petition and of all documents which accompany it."

"20. किसी निर्वाचन को प्रश्नगत करने वाली प्रत्येक याचिका, न्यायालय के पांच से अन्यून न्यायाधीशों से गठित न्यायपीठ के समक्ष प्रस्तुत की जाएगी तथा उसके द्वारा सुनी जाएगी और निपटायी जाएगी।"

"34. इस आदेश के उपबंधों या किसी विशेष आदेश या न्यायालय के निदेशों के अध्यधीन, निर्वाचन याचिका की प्रक्रिया में, जहां तक हो सके, न्यायालय के समक्ष उसकी आरंभिक अधिकारिता के प्रयोग में कार्यवाहियों में प्रक्रिया का अनुसरण किया जाएगा।"

19. उच्चतम न्यायालय नियम, 1966 का भाग III,-न्यायालय के समक्ष उसकी आरंभिक अधिकारिता के प्रयोग में कार्यवाहियों में प्रक्रिया से संबंधित है जिसमें आदेश XXIII वादपत्रों से संबंधित है, जो आदेश XXXIX के, नियम 34 के कारण ऐसी निर्वाचन याचिकाओं को लागू होंगे। आदेश XXIII में सुसंगत नियम, नियम, 6 और 7 हैं, जो निम्न प्रकार हैं :

*"6. (क) जहां वादपत्र वाद हेतुक को प्रकट नहीं करता, और

(ख) जहां वादपत्र में किए गए कथन से वाद किसी विधि द्वारा वर्जित प्रतीत होता है,

वहां वादपत्र नामंजूर कर दिया जाएगा।

7. जहां वाद पत्र को नामंजूर कर दिया जाता है, वहां न्यायालय इस आशय के आदेश को उक्त आदेश के कारणों सहित, अभिलिखित करेगा।"

20. आदेश XXXIX नियम 5 यह अपेक्षा करता है कि निर्वाचन याचिका, न्यायालय को याचिका करने के "अधिनियम के अधीन याची के अधिकार" का वर्णन करेगी और "उसके द्वारा दावा किए गए अनुतोषों को बनाए (कायम) रखने के लिए उसके द्वारा अवलंब लिए गए तथ्यों और आधारों" का संक्षेप में वर्णन करेगी। इसके अतिरिक्त, आदेश

"20. Every petition calling in question an election shall be posted before and be heard and disposed of by a bench of the Court consisting of not less than five Judges."

"34. Subject to the provisions of this Order or any special Order or directions of the Court, the procedure on an election petition shall follow, as nearly as may be, the procedure in proceedings before the Court in the exercise of its original jurisdiction."

*"6. The plaint shall be rejected—

(a) where it does not disclose a cause of action.

(b) where the suit appears from the statement in the plaint to be barred by any law.

7. Where a plaint is rejecten the Court shall record an order to that effect with the reasons for the order."

1992(9) eILR(PAT) SC 1

XXXIX, नियम 7 यह अपेक्षा करता है कि याचिका, अधिनियम की धारा 18 की उपधारा (1) और धारा 19 में विनिर्दिष्ट एक या अधिक आधारों पर, ऐसे निर्वाचन के किसी अभ्यर्थी द्वारा या राष्ट्रपतीय निर्वाचन के मामले में याचियों के रूप में संयोजित बीस या अधिक निर्वाचकों द्वारा प्रस्तुत की जानी चाहिए। यह अधिनियम की धाराओं 14 और 14-क की अपेक्षाओं के अनुसार है। उसके पश्चात्, आदेश XXXIX, नियम 34 में यह कहा गया है कि 'इस आदेश के उपबंधों या किसी विशेष आदेश या न्यायालय के निदेश के अध्यधीन', निर्वाचन याचिका के विचारण में न्यायालय द्वारा अनुसरण की गई प्रक्रिया, जहां तक संभव हो, न्यायालय के समक्ष उसकी आरंभिक अधिकारिता के प्रयोग में कार्यवाहियों में प्रक्रिया होगी। यह किसी वाद-पत्र को, जहां यह किसी वाद हेतुक को प्रकट नहीं करता या अभिवचन में किए गए कथन से किसी विधि द्वारा वर्जित प्रतीत होता है, नामंजूर करने से संबंधित आदेश XXIII के नियम 6 और 7 में अंतर्विष्ट उपबंधों को आकर्षित करता है।

21. इन याचिकाओं में उठायी गई प्रारंभिक आपत्ति यह है कि किसी विचारणीय विवाद्यक को उठाने के लिए उनमें से किसी में भी वाद हेतुक को प्रकट नहीं किया गया है और वे अधिनियम में अंतर्विष्ट उपबंधों द्वारा वर्जित हैं। 1992 की निर्वाचन याचिका संख्या 1 में, इसके अतिरिक्त की गई आपत्ति यह है कि यह एक सक्षम व्यक्ति द्वारा फाइल नहीं की गई है।

22. अब हम इन याचिकाओं में उठायी गई प्रारंभिक आपत्तियों पर विचार करेंगे।

1992 की निर्वाचन अर्जी सं० 1

23. 1992 की निर्वाचन अर्जी सं० 1 में प्रारंभिक आपत्ति यह है कि मिथिलेश कुमार सिन्हा उक्त अधिनियम की धारा 13(क) के अर्थान्तर्गत "अभ्यर्थी" नहीं है और वह अपनी निर्वाचन अर्जी में एकमात्र अर्जीदार है, इसलिए यह निर्वाचन अर्जी सुप्रीम कोर्ट रूल्स, 1966 के नियम 7, आदेश 39 और उक्त अधिनियम की धारा 14-क के अनुसार प्रस्तुत नहीं की गई है। अनुकल्पतः श्री कपिल सिब्बल तथा विद्वान् महान्यायवादी द्वारा यह दलील दी गई थी कि यह मानते हुए भी कि मिथिलेश कुमार सिन्हा उक्त निर्वाचन में एक अभ्यर्थी थे और उक्त अधिनियम की धारा 14-क और सुप्रीम कोर्ट रूल्स के नियम 7, आदेश 39 का अनुपालन नहीं किया गया था, धारा 18(1) (ग) में का आधार निर्वाचन अर्जी में उसके नामनिर्देशन पत्र को गलत तौर पर नामंजूर करने का आधार, जिस पर निर्वाचन अर्जी आधारित है या उक्त अधिनियम की धारा 18 में का कोई अन्य आधार गठित करने के लिए महत्वपूर्ण आवश्यक तथ्य अंतर्विष्ट नहीं हैं। इस आधार पर यह दलील दी गई है कि उक्त निर्वाचन अर्जी आरंभ में ही नामंजूर किए जाने योग्य है क्योंकि इसमें यह मानकर भी कि उक्त अर्जी विधिमान्यतः प्रस्तुत की गई है, कोई विचारणीय विवाद्यक उद्भूत नहीं होता।

24. तथापि मिथिलेश कुमार सिन्हा ने, जो स्वयं अर्जीदार है, यह दलील दी कि वह उक्त अधिनियम की धारा 13(क) के अर्थान्तर्गत एक 'अभ्यर्थी' था क्योंकि उसके नाम-निर्देशन पत्र में दस निर्वाचकों के प्रस्थापकों के रूप में और दस निर्वाचकों के समर्थकों के रूप में हस्ताक्षर अंतर्विष्ट थे, जैसा कि उक्त अधिनियम की धारा 5ख(1) (क) द्वारा अपेक्षित है और

इसलिए, उसका नाम-निर्देशन विधिमान्य होने के कारण धारा 18(1) (ग) के अधीन उसके नाम-निर्देशन पत्र के गलत रूप से नामंजूर करने के आधार का अभिवचन करने के लिए तात्विक तथ्यों का उसके द्वारा फाइल की गई तारीखों की सूची के साथ पठित अर्जी में वर्णन किया गया है। अर्जीदार ने अपनी बहस के दौरान स्पष्टतः यह स्वीकार किया कि 24-6-1992 को श्री राम जेठमलानी ने अर्जीदार मिथिलेश कुमार सिन्हा द्वारा उसी दिन बाद में नाम-निर्देशन पत्र फाइल किए जाने से पहले अपना नाम-निर्देशन पत्र फाइल किया था, जिस पर कुछ (सामान्य) निर्वाचकों के हस्ताक्षर थे। तथापि, अर्जीदार ने यह दलील दी कि धारा 5-ख(5) की अपेक्षा यह है कि ऐसे किसी निर्वाचक के हस्ताक्षर, जिसने एक नाम-निर्देशन पत्र से अधिक नाम-निर्देशन पत्रों पर प्रस्थापक या समर्थक के रूप में हस्ताक्षर किए हैं, उस नाम-निर्देशन पत्र में प्रभावी होते हैं, जिस पर उसने समय के हिसाब से पहले हस्ताक्षर किए हैं, भले ही वह नाम-निर्देशन पत्र रिटर्निंग अधिकारी को बाद में परिदत्त किया गया है। अर्जीदार की दलील यह है कि धारा 5-ख(5) में "परिदत्त" शब्द का अर्थान्वयन "हस्ताक्षरित" के रूप में किया जाना चाहिए। सारांश में, उसकी दलील यह है कि उन निर्वाचकों ने, जिनके हस्ताक्षर उसके नाम-निर्देशन पत्र में तथा रिटर्निंग आफिसर को पहले परिदत्त श्रीराम जेठमलानी के नाम-निर्देशन पत्र में सामान्य थे, वास्तव में अर्जीदार के नाम-निर्देशन पत्र पर अपने हस्ताक्षर पहले किए थे और इसलिए श्रीराम जेठमलानी के नाम-निर्देशन पत्र पर बाद में किए गए उनके हस्ताक्षर अप्रवर्तनशील (निष्प्रभाव) थे। इस आधार पर, अर्जीदार के अनुसार, धारा 5-ख(5) अर्जीदार के नाम-निर्देशन पत्र को नामंजूर किए जाने (के कार्य) को अनुज्ञात करने हेतु लागू नहीं होती थी और इसलिए, धारा 18(1) (ग) के अधीन उसके नाम-निर्देशन पत्र के गलत रूप से नामंजूर करने का आधार उक्त निर्वाचन को अविधिमान्य करने के लिए उद्भूत होता है। अर्जीदार ने यह भी अभिकथन किया कि उसके नाम-निर्देशन पत्र पर हस्ताक्षरों में से एक हस्ताक्षर को मिटा दिया गया था जिससे यह प्रतीत हो कि उक्त अधिनियम की धारा 5-ख(1) (क) के अनुसार प्रस्थापकों के रूप में निर्वाचकों की अपेक्षित संख्या में कमी थी।

25. हम यह उल्लेख कर सकते हैं कि अर्जी के समर्थन में किए गए प्रकथनों के रूप में मानते हुए, हमारे द्वारा कथित अनेक तथ्य उक्त आवेदन में अंतर्विष्ट नहीं है। तथापि, अर्जीदार के फायदे के लिए हमने अर्जी के एक भाग के रूप में उसके द्वारा फाइल की गई तारीख की सूची को भी पढ़ा है। हमने अर्जीदार को उसकी बहस के दौरान कतिपय दस्तावेज फाइल करने के लिए भी अनुज्ञात किया था, जिनका उसने अवलंब लिया था, और उन दस्तावेजों को विचार में लिया गया है। अंत में अर्जीदार ने यह दलील दी कि उक्त अधिनियम की धारा 17 अभिवचनों में कमी होते हुए भी (का विचार किए बिना) निर्वाचन अर्जी के पूर्ण विचारण की अपेक्षा करती है और न्यायालय को इस प्रक्रम पर, संपूर्ण विचारण किए बिना, निर्वाचन अर्जी को खारिज करने की कोई शक्ति नहीं है।

26. इस मामले पर व्यग्रतापूर्वक विचार करने के पश्चात्, हमें इस बारे में कोई संदेह नहीं रहा है कि यह निर्वाचन अर्जी प्रारंभ में ही खारिज की जानी चाहिए क्योंकि इस अर्जी के और लंबित रहने से इस न्यायालय के समय की बरबादी ही होगी, अनावश्यक लोक खर्चे होंगे और इस न्यायालय की कार्यवाही का लंबे समय तक दुरुपयोग होगा।

27. जैसा कि पूर्व में संकेत दिया गया है, चूंकि यह निर्वाचन अर्जी तात्त्विक विशिष्टियों में त्रुटियुक्त है इसलिए इस अर्जी के चलने योग्य होने के प्रश्न का विनिश्चय करने के प्रयोजन के लिए उक्त कमी के प्रभाव पर विचार किए बिना हमने अर्जीदार को सुनवाई के प्रक्रम पर अनेक दस्तावेज फाइल करने के लिए अनुज्ञात किया था, जिनके अंतर्गत अभ्यर्थियों के नाम-निर्देशन पत्रों की प्रतियां और रिटर्निंग आफिसर द्वारा की गई संवीक्षा कार्यवाहियों का अभिलेख भी शामिल था। अर्जीदार मिथिलेश कुमार सिन्हा के नाम-निर्देशन पत्र की क्रम सं० 60 है, जो रिटर्निंग आफिसर को 24-6-1992 को 12.50 अपराह्न में स्वयं मिथिलेश कुमार द्वारा परिदत्त किया गया था। 25-6-1992 को की गई संवीक्षा पर अर्जीदार के नाम-निर्देशन पत्र पर अभिलिखित रिटर्निंग आफिसर का विनिश्चय इस प्रकार है :

> "क्रम सं० 60 पर श्री मिथिलेश कुमार के इस नाम-निर्देशन पत्र पर 10 प्रस्थापकों के हस्ताक्षर हैं, जिनमें से क्रम सं० 6 पर के एक प्रस्थापक, अर्थात् श्री जवाहर प्रसाद सिंह ने अपने हस्ताक्षर नहीं किए हैं। इसलिए, इसमें प्रस्थापकों की अपेक्षित संख्या में कमी है। इसके अतिरिक्त, श्री सुरेन्द्र शर्मा, जो श्री मिथिलेश कुमार के एक प्रस्थापक हैं, क्रम सं० 45 पर श्री राम जेठमलानी के नाम-निर्देशन पत्र पर समर्थक के रूप में पहले ही हस्ताक्षर कर चुके हैं। इसलिए उनके हस्ताक्षर प्रस्तुत नाम-निर्देशन पत्र पर (अप्रवर्तनशील) निष्प्रभाव हैं। इसी प्रकार, श्री प्रेमनाथ जायसवाल, श्री सरयूग मण्डल, श्री राजकुमार महासेठा, श्री विनोद कुमार राय और श्री मधु सिंह, जो श्री मिथिलेश कुमार के समर्थक हैं, पहले ही क्रम सं० 45 पर श्री राम जेठमलानी के नाम-निर्देशन पत्र पर समर्थकों के रूप में हस्ताक्षर कर चुके हैं और इस प्रकार उनके हस्ताक्षर भी श्री मिथिलेश कुमार के नाम-निर्देशन पत्र पर निष्प्रभाव (अप्रवर्तनशील) हो गए हैं। इसलिए मैं उक्त नाम-निर्देशन पत्र उक्त अधिनियम की धारा 5-ङ(3) (ग) के अधीन नामंजूर करता हूं।"

28. रिटर्निंग आफिसर द्वारा अर्जीदार के नाम-निर्देशन पत्र की नामंजूरी के लिए दिए गए कारणों से यह दर्शित होता है कि प्रस्थापकों की अपेक्षित संख्या में कमी थी क्योंकि नामित प्रस्थापकों में से एक जवाहर प्रसाद सिंह नामक प्रस्थापक ने अपने हस्ताक्षर नहीं किए थे। इसके अतिरिक्त, मिथिलेश कुमार का एक प्रस्थापक, सुरेन्द्र शर्मा, पहले ही राम जेठमलानी के नाम-निर्देशन पत्र पर समर्थक के रूप में हस्ताक्षर कर चुका था, जो मिथिलेश कुमार के नाम-निर्देशन पत्र के पहले फाइल किया गया था और इसलिए धारा 5-ख(5) के अनुसार उसके हस्ताक्षर निष्प्रभाव (अप्रवर्तनशील) हो गए थे। इसी प्रकार प्रेमनाथ जायसवाल, सरयूग मण्डल, राजकुमार महासेठा, विनोद कुमार राय और मधु सिंह, जो मिथिलेश कुमार के समर्थक थे, पहले ही राम जेठमलानी के नाम-निर्देशन पत्र पर समर्थकों के रूप में हस्ताक्षर कर चुके थे, जो पहले ही फाइल किया जा चुका था और इस प्रकार उनके हस्ताक्षर भी मिथिलेश कुमार के नाम-निर्देशन पत्र पर निष्प्रभाव (अप्रवर्तनशील) हो गए थे। इसलिए, अर्जीदार के नाम-निर्देशन पत्र की खारिजी के लिए कारण यह था कि उसमें धारा 5-ख(1)(क) की आज्ञापक अपेक्षाओं का पालन नहीं किया गया था, जिससे रिटर्निंग आफिसर के लिए मिथिलेश कुमार के नाम-निर्देशन पत्र को धारा 5-ङ(3) (ग) के अधीन संवीक्षा के समय खारिज करना आबद्धकर हो गया था।

29. इस कठिनाई को पार करने के लिए अर्जीदार मिथिलेश कुमार सिन्हा ने यह दलील दी कि धारा 5-ख(5) में "परिदत्त" शब्द का "हस्ताक्षरित" के रूप में अर्थान्वियन किया जाना चाहिए। धारा 5-ख(5) के अर्थान्वियन के संबंध में अर्जीदार की दलील पर अब विचार किया जा सकता है। सुविधा की दृष्टि से, धारा 5-ख(5) को यहां पर पुनः उद्धृत किया जा सकता है :

> "कोई निर्वाचक उसी निर्वाचन में, चाहे प्रस्थापक के रूप में या समर्थक के रूप में एक से अधिक नाम-निर्देशन पत्र पर हस्ताक्षर नहीं करेगा। और यदि वह एक से अधिक नाम-निर्देशन पत्र पर हस्ताक्षर करता है तो प्रथम परिदत्त नाम-निर्देशन पत्र से भिन्न किसी भी नाम-निर्देशन पत्र पर उसका हस्ताक्षर निष्प्रभाव होगा।"

धारा 5-ख की उपधारा (1) यह अपेक्षा करती है कि नियत की गई तारीख को या उसके पूर्व प्रत्येक अभ्यर्थी या तो स्वयं या अपने प्रस्थापकों अथवा समर्थकों में से किसी के द्वारा विनिर्दिष्ट समय के बीच विहित प्ररूप में भरा गया नाम-निर्देशन पत्र रिटर्निंग आफिसर को परिदत्त करेगा जिस पर अभ्यर्थी के नाम-निर्देशन की अनुमति देते हुए हस्ताक्षर होंगे तथा राष्ट्रपतीय निर्वाचन की दशा में कम-से-कम 10 निर्वाचकों के प्रस्थापकों के रूप में और कम-से-कम 10 निर्वाचकों के समर्थकों के रूप में भी हस्ताक्षर होंगे। इस सदर्भ में "परिदत्त" और "हस्ताक्षरित" शब्दों के बीच भेद उपधारा (1) में स्पष्ट रूप से इंगित किया गया है। नाम-निर्देशन पत्र का परिदान रिटर्निंग आफिसर को किया जाना है और उक्त नाम-निर्देशन पत्र स्वयं अभ्यर्थी द्वारा, उसके प्रस्थापकों और समर्थकों द्वारा हस्ताक्षरित किया जाएगा। उपधारा (1) में इस संदर्भ में "परिदान" शब्द के अर्थ में किसी अस्पष्टता के लिए कोई गुंजाइश नहीं है। उपधारा (2) यह अपेक्षा करती है कि प्रत्येक नाम-निर्देशन पत्र के साथ उस संसदीय निर्वाचन क्षेत्र की, जिसमें अभ्यर्थी निर्वाचक के रूप में रजिस्ट्रीकृत है, निर्वाचन नामावली में अभ्यर्थी से संबंधित प्रविष्टि की एक प्रमाणित प्रति होगी। तत्पश्चात् उपधारा (3) यह कहती है कि रिटर्निंग आफिसर किसी ऐसे नाम-निर्देशन पत्र को स्वीकार नहीं करेगा, जो उपधारा (1) में विनिर्दिष्ट समय के भीतर प्रस्तुत नहीं किया गया है। उपधारा (4) यह अपेक्षा करती है कि जो नाम-निर्देशन पत्र नियत की गई अंतिम तारीख को विनिर्दिष्ट समय से पहले प्राप्त नहीं होता है या जिसके साथ इस धारा की उपधारा (2) में निर्दिष्ट प्रमाणित प्रति संलग्न नहीं है वह नामंजूर कर दिया जाएगा। उसके पश्चात् धारा 5 आती है, जिससे हमारा इस मामले में संबंध है। इसी संदर्भ में उपधारा (5) किसी ऐसे निर्वाचक को उसी निर्वाचन में, चाहे प्रस्थापक के रूप में या समर्थक के रूप में एक से अधिक नाम-निर्देशन पत्र पर हस्ताक्षर करने से निवारित करती है और इसका पालन न करने के लिए यह उपबंधित करके परिणाम विहित करती है कि उपधारा (5) के प्रथम भाग में इस आज्ञा के अननुपालन की दशा में प्रथम परिदत्त नाम-निर्देशन पत्र से भिन्न किसी भी नाम-निर्देशन पत्र पर उसके हस्ताक्षर निष्प्रभाव होंगे। इसी संदर्भ में उपधारा (5) में 'परिदान' शब्द का अर्थान्वियन किया जाना है।

30. जैसा कि उपदर्शित किया जा चुका है उपधारा (1) में "परिदत्त" और "हस्ताक्षरित" शब्दों के अर्थ में अंतर स्पष्ट रूप से सामने लाया गया है और उसी संदर्भ में उप-

धारा (5) में प्रयुक्त इन शब्दों का वही अर्थ होगा। उपधारा (5) का स्पष्ट अर्थ यह है कि कोई भी निर्वाचक उसी निर्वाचन में एक से अधिक नाम-निर्देशन पत्र पर चाहे प्रस्थापक के रूप में या समर्थक के रूप में हस्ताक्षर नहीं कर सकता और यदि वह ऐसा करता है या, दूसरे शब्दों में, यदि कोई निर्वाचक उसी निर्वाचन में एक से अधिक नाम-निर्देशन पत्र पर, चाहे प्रस्थापक के रूप में या समर्थक के रूप में हस्ताक्षर करता है तो उसके उस नाम-निर्देशन पत्र से भिन्न किसी नाम-निर्देशन पत्र पर हस्ताक्षर निष्प्रभाव होंगे, जो उपधारा (1) द्वारा यथा अपेक्षित रिटर्निंग आफिसर को पहले परिदत्त किया गया है। इसका अभिप्राय यह है कि कोई भी निर्वाचक चाहे प्रस्थापक के रूप में या समर्थक के रूप में उसी निर्वाचन में केवल एक ही नाम-निर्देशन पत्र पर हस्ताक्षर कर सकता है और जहां वह उसी निर्वाचन में उस नाम-निर्देशन पत्र के अलावा, जो रिटर्निंग आफिसर को प्रथम परिदत्त किया गया है, एक से अधिक नाम-निर्देशन पत्र पर हस्ताक्षर करता है वहां रिटर्निंग आफिसर को बाद में परिदत्त किसी नाम-निर्देशन पत्र पर उसके हस्ताक्षर निष्प्रभाव या प्रभावहीन होंगे। यह स्पष्ट है कि निर्वाचक को केवल एक ही अभ्यर्थी को प्रायोजित करने का अधिकार है और इसलिए केवल एक ही नाम-निर्देशन पत्र पर प्रस्थापक या समर्थक के रूप में हस्ताक्षर करने का अधिकार है, वह अधिकार उसी क्षण निःशेष हो जाता है, जब उसके द्वारा हस्ताक्षरित प्रथम नाम-निर्देशन पत्र रिटर्निंग आफिसर को परिदत्त कर दिया जाता है और रिटर्निंग आफिसर को तत्पश्चात् प्रदत्त किसी नाम-निर्देशन पत्र पर उसके हस्ताक्षर के प्रभावी होने का कोई प्रश्न उद्भूत नहीं होता। रिटर्निंग अधिकारी द्वारा उस प्रश्न की कोई जांच अनुध्यात नहीं है, जहां पर एक ही निर्वाचक द्वारा एक से अधिक हस्ताक्षरित नाम-निर्देशन पत्र रिटर्निंग अधिकारी को प्रदत्त किए गए हैं, क्योंकि कानून में यह उपबंध है कि (चूंकि) किसी निर्वाचक का किसी अभ्यर्थी को प्रस्थापित या समर्थित करने के अधिकार का केवल एक ही बार प्रयोग किया जा सकता है, अतः यह अधिकार उसी क्षण निःशेष हो जाता है, जब उसके द्वारा हस्ताक्षरित प्रथम नाम-निर्देशन पत्र रिटर्निंग अधिकारी को परिदत्त कर दिया जाता है। इस प्रकार 'परिदत्त' शब्द का उपधारा (5) में "हस्ताक्षरित" के रूप में अर्थान्वयन किए जाने की कोई गुंजाइश नहीं है, जैसा कि अर्जीदार द्वारा सुझाव दिया गया है क्योंकि इन दोनों शब्दों का अर्थ भिन्न है और वे केवल उपधारा (5) में ही नहीं, बल्कि उसी संदर्भ में धारा 5ख की उपधारा (1) में भिन्न प्रयोजनों के लिए प्रयुक्त किए गए हैं। धारा 5-ख की दोनों उपधाराओं में इन शब्दों का एक ही अर्थ होगा। इसलिए धारा 5-ख की उपधारा (5) का अर्जीदार द्वारा किया गया अर्थान्वयन अस्वीकार किया जाना चाहिए।

31. अर्जीदार द्वारा सुनवाई के समय किए गए स्पष्ट कथन को दृष्टिगत करते हुए (देखते हुए) जो उसके द्वारा फाइल किए गए दस्तावेजों से भी प्रकट होता है, कुछ सामान्य (उभयनिष्ठ) निर्वाचकों द्वारा हस्ताक्षरित श्री राम जेठमलानी का नामनिर्देशन पत्र धारा 5-ख (1) (क) द्वारा यथा अपेक्षित रूप में रिटर्निंग आफिसर को पहले परिदत्त किया गया था और इसलिए, अर्जीदार के तत्पश्चात् परिदत्त किए गए नामनिर्देशन पत्र पर उन्हीं निर्वाचकों के हस्ताक्षर धारा 5-ख(5) के कारण निष्प्रभाव थे। इसलिए इसका स्पष्ट परिणाम यह है कि तत्पश्चात् प्रदत्त किया गया अर्जीदार, मिथिलेश कुमार सिन्हा का नामनिर्देशन पत्र कम से कम 10 निर्वाचकों द्वारा प्रस्थापकों के रूप में और कम से कम 10 निर्वाचकों द्वारा समर्थकों के रूप में हस्ताक्षरित नहीं था जैसा कि धारा 5-ख (1)(क) द्वारा अपेक्षित है, जिससे

रिटर्निंग आफिसर का यह दायित्व हो गया था कि वह धारा 5-ङ (3) (ग) में अंतर्विष्ट आधार पर अर्जीदार के नामनिर्देशन पत्र को खारिज कर देता। रिटर्निंग आफिसर द्वारा अर्जीदार के नामनिर्देशन पत्र को खारिज करने के लिए यही कारण दिया गया है, जैसा कि धारा 5ङ (7) द्वारा अपेक्षित है। यह मानते हुए भी जैसा कि अर्जीदार द्वारा दावा किया गया है, कि उसका नाम निर्देशन पत्र 10 निर्वाचकों द्वारा प्रस्थापकों के रूप में और 10 निर्वाचकों द्वारा समर्थकों के रूप में हस्ताक्षरित था जिनके अंतर्गत निष्प्रभाव (अप्रवर्तनीय) सामान्य (उभयनिष्ठ) हस्ताक्षर भी थे और नामनिर्देशन पत्र से प्रकट इस तथ्य को अनदेखी करते हुए भी कि गिनती में एक हस्ताक्षर की कमी थी क्योंकि जवाहर प्रसाद सिंह ने जिसका प्रस्थापक के रूप में नाम था, नामनिर्देशन पत्र पर अपने हस्ताक्षर नहीं किए थे, यह निष्कर्ष अपरिहार्य है।

32. धारा 14-क की यह अपेक्षा कि राष्ट्रपतीय निर्वाचन को प्रश्नगत करने वाली निर्वाचन अर्जी ऐसे निर्वाचन के किसी अभ्यर्थी द्वारा या अर्जीदारों के रूप में संयोजित 20 या उससे अधिक निर्वाचकों द्वारा प्रस्तुत की जाएगी, इस स्पष्ट कारण के लिए है कि धारा 5ख (क) के अनुसार किसी राष्ट्रपतीय निर्वाचन में किसी विधिमान्य नामनिर्देशन के लिए अपेक्षा यह है कि किसी अभ्यर्थी का कम से कम 10 निर्वाचकों द्वारा प्रस्थापकों के रूप में और उतनी ही संख्या के निर्वाचकों द्वारा समर्थकों के रूप में अर्थात् कम से कम कुल 20 निर्वाचकों द्वारा नामनिर्देशन होना चाहिए। स्वयं को किसी निर्वाचन में सम्यक् रूप से नामनिर्देशित अभ्यर्थी के रूप में दावा करने के हकदार व्यक्ति के पास उसके विधिमान्य नामनिर्देशन पत्र पर प्रस्थापकों और समर्थकों के रूप में हस्ताक्षर करने वाले कम से कम 20 निर्वाचक होने चाहिए। विधि का कभी ऐसा आशय नहीं हो सकता कि धारा 5-ख (1) (क) की अपेक्षाओं को पूरा किए बिना कोई भी व्यक्ति किसी निर्वाचन में अभ्यर्थी के रूप में सम्यक् रूप से नामनिर्देशित होने का दावा कर सकता है भले ही उसके पास उसे एक अभ्यर्थी के रूप में विधिमान्य रूप से प्रायोजित करने के लिए प्रस्थापकों और समर्थकों के रूप में 20 निर्वाचक न हों। यदि धारा 14क के अनुसार कोई निर्वाचन अर्जी अर्जीदारों के रूप में सयोजित 20 से अन्यून निर्वाचकों द्वारा पेश नहीं की जा सकती तब उसे अर्जीदार के रूप में किसी अभ्यर्थी की आनुकल्पिक रीति द्वारा स्पष्टतः प्रस्तुत नहीं किया जा सकता, जिसे कम से कम 20 निर्वाचकों द्वारा विधिमान्य रूप से नामनिर्देशित नहीं किया गया था। धारा 14-क (1) की यह अपेक्षा इस बात का स्पष्ट संकेत है कि ऐसा कोई व्यक्ति राष्ट्रपतीय निर्वाचन में स्वयं को एक अभ्यर्थी के रूप में सम्यक् रूप से नामनिर्देशित होने का दावा नहीं कर सकता, जब तक कि उसने धारा 5-ख (1) (क) और धारा 5 (ग) की आज्ञापक अपेक्षाओं का समाधान (को पूरा) नहीं कर दिया हो।

33. किसी निर्वाचन को प्रश्नगत करने के लिए कोई निर्वाचन अर्जी प्रस्तुत करने के लिए हकदार बनने हेतु अर्जीदार को ऐसे निर्वाचन में धारा 13क के अर्थान्तर्गत एक 'अभ्यर्थी' होना चाहिए, जिसके लिए उसे 'अभ्यर्थी' के रूप में सम्यक् रूप से 'नामनिर्देशित' होना चाहिए और ऐसा दावा वह तब तक नहीं कर सकता, जब तक कि धारा 5-ख (1) (क) और धारा 5-ग की आज्ञापक अपेक्षाओं का उसके द्वारा पालन न कर दिया गया हो। जहां पर अविवादास्पद तथ्यों के आधार पर किसी विधिमान्य नामनिर्देशन के लिए इन आज्ञापक अपेक्षाओं में से

किसी अपेक्षा का पालन नहीं किया गया था वहां पर उक्त अर्जीदार धारा 13-क के अर्थान्तर्गत एक अभ्यर्थी नहीं था और इसलिए धारा 14-क के अनुसार वह अर्जी प्रस्तुत करने के लिए सक्षम नहीं था ।

34. इस न्यायालय के विनिश्चयों द्वारा यह भी सुस्थिर है कि उक्त अधिनियम की धारा 14-क के अनुसार ऐसी कोई निर्वाचन अर्जी प्रस्तुत करने के लिए हकदार बनने हेतु धारा 13-क के अर्थान्तर्गत एक अभ्यर्थी के रूप में अपेक्षित सुने जाने का अधिकार रखने के लिए अर्जीदार को धारा 5-ख (1) (क) और धारा 5-ग के अनुसार एक अभ्यर्थी के रूप में सम्यक् रूप से नामनिर्देशित होना चाहिए । जब तक ऐसा नहीं है, तब तक अर्जीदार यह भी दावा नहीं कर सकता कि उसे उक्त निर्वाचन में एक अभ्यर्थी के रूप में सम्यक् रूप से नामनिर्देशित किया गया था, जैसा कि धारा 13 (क) द्वारा अपेक्षित है । अर्जीदार, मिथिलेश कुमार सिन्हा के नामनिर्देशन पत्र के संबंध में, उसके द्वारा अर्जी में वर्णित और, सुनवाई के समय उसके द्वारा कथित तथ्यों से, जो उसके द्वारा फाइल किए गए दस्तावेजों से प्रकट है उपर्युक्त निष्कर्ष से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि अर्जीदार, मिथिलेश कुमार सिन्हा को विजयी अभ्यर्थी डा० शंकर दयाल शर्मा के निर्वाचन को चुनौती देने का कोई कानूनी अधिकार नहीं है क्योंकि वह पठित, सुप्रीम कोर्ट रूल्स के आदेश 39, नियम 7 के साथ पठित उक्त अधिनियम की धारा 14-क के अनुसार निर्वाचन अर्जी प्रस्तुत करने के लिए सक्षम नहीं है । अन्यथा भी, उक्त अधिनियम की धारा 18 (1) (ग) के अधीन उक्त निर्वाचन अर्जी में प्राथित उसके नामनिर्देशन पत्र की सदोष खारिजी का आधार उपर्युक्त तथ्यों के आधार पर एक विचारणीय विवाद्यक को उद्भूत नहीं करती और उससे यही अपरिहार्य निष्कर्ष निकलता है । उस आधार की विद्यमानता का प्रथमदृष्ट्या मामला बनाने के लिए तात्विक तथ्यों की अभिवचनों में कमी है और स्वयं अर्जीदार के कथन द्वारा ही उनका पूर्णतः खंडन हो जाता है ।

35. **चरणलाल साहू** बनाम **नीलम संजीव रेड्डी**[1] में निर्वाचन अर्जी को, जिसमें ऐसी ही त्रुटि थी, निर्वाचित अभ्यर्थी की ओर से उक्त निर्वाचन अर्जी की ग्राह्यता (चलने योग्य होने) के बारे में उठाई गई आरंभिक आपत्ति पर, आरंभ में ही खारिज कर दिया गया था । उसमें सात न्यायाधीशों की एक न्यायपीठ ने यह अभिनिर्धारित किया :—

> "हमने ऊपर वर्णित उपबंधों पर सावधानीपूर्वक विचार किया है । उसके परिणामस्वरूप हमारी यह राय है कि (चूंकि) राष्ट्रपतीय निर्वाचन को प्रश्नगत करने की प्रक्रिया अथवा रीति अधिकथित की जा चुकी है, अतः अर्जीदार को उस प्रक्रिया की परिधि के भीतर आना चाहिए, जिससे उसे राष्ट्रपतीय निर्वाचन पर आक्षेप करने का अधिकार मिल सके और वह अर्जी लाने में समर्थ हो सके । यदि वह अपनी अर्जी में ही अपने द्वारा किए गए प्राख्यानों के आधार पर न तो अभ्यर्थी है और न होने का दावा ही कर सकता है, तो उसे भारत के राष्ट्रपति के रूप में श्री नीलम संजीव रेड्डी के निर्वाचन को प्रश्नगत करने का अधिकार नहीं होगा । इस न्यायालय के आदेश 39 के नियम 2 और 5 के साथ पठित, अधिनियम की धारा 14 (1), 14 (2) और 14 (3) और 14-क (1) के उपबंधों का प्रभाव यह है कि हमारे

1 [1978] 3 उम० नि० प० 1 = [1978] 3 एस० सी० आर० 1.

समक्ष अर्जी वर्जित है क्योंकि अर्जीदार के पास अर्जी लाने (चलाने) के लिए अपेक्षित अधिकार नहीं है।" (पृष्ठ 11 और 12)

36. ऐसा ही प्रश्न **चरणलाल साहू और अन्य** बनाम **ज्ञानी जैल सिंह और एक अन्य**[1] में उद्भूत हुआ था। उस मामले में भी प्रारंभिक आपत्ति निर्वाचन अर्जी के चलने योग्य होने के बारे में इस आधार पर की गई थी कि अर्जीदार अधिनियम की धारा 13 (क) के अर्थान्तर्गत एक अभ्यर्थी नहीं था और इसलिए, वह अधिनियम की धारा 14-क के अधीन कोई निर्वाचन अर्जी फाइल करने का हकदार नहीं था। यह अभिनिर्धारित किया गया कि उस मामले में अर्जीदार एक अभ्यर्थी के रूप में सम्यक् रूप से नामनिर्देशित किए जाने का दावा नहीं कर सकता क्योंकि उसने धारा 5-ख (1) (क) की आज्ञापक अपेक्षाओं को पूरा नहीं किया था। प्रारंभिक आपत्ति को बहाल रखा गया और न्यायालय द्वारा उक्त निर्वाचन अर्जी इस आधार पर खारिज कर दी गई कि अर्जीदार को उक्त अर्जी लाने का कोई कानूनी अधिकार नहीं था।

37. इस संबंध में अगला मामला **मिथिलेश कुमार** बनाम **श्री आर० वेंकटरमन् और अन्य**[2] है, जो इसी अर्जीदार, मिथिलेश कुमार के संबंध में है। उस मामले में भी प्रश्न निर्वाचित अभ्यर्थी द्वारा उठाई गई प्रारंभिक आपत्ति पर इस बारे में उद्भूत हुआ था कि क्या उक्त निर्वाचन अर्जी सुप्रीम कोर्ट रूल्स के आदेश 23 के नियम 6 के अधीन इस आधार पर खारिज किए जाने के दायित्वाधीन थी कि उसमें किसी वाद हेतुक को प्रकट नहीं किया गया था। न्यायालय ने उक्त अर्जी को खारिज कर दिया, जैसा कि सुप्रीम कोर्ट रूल्स के आदेश 23 के नियम 6 में अपेक्षित है क्योंकि उक्त अर्जी में असम्यक् असर के आधार के विचारण के लिए कोई वाद हेतुक प्रकट नहीं होता था, जिसे उक्त अर्जी में उठाने की ईप्सा की गई थी। उक्त निर्वाचन अर्जी को इस प्रकार खारिज करते हुए न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया :—

> "······यह अर्जी उतनी ही निरस्सार है जितनी कि वह हो सकती थी। सुनवाई के बाद समस्त अर्जी पढ़ लेने के बाद न्यायालय ने अर्जीदार से यह बताने के लिए कहा कि क्या कोई ऐसा अभिकथन है कि स्वयं प्रथम प्रत्यर्थी ने असम्यक् असर डालने का कोई कार्य किया था या किसी अन्य व्यक्ति ने प्रथम प्रत्यर्थी की सम्मति से ऐसा कार्य किया था या ऐसा कोई अभिकथन है जिसका विचारण किए जाने की आवश्यकता है किंतु अर्जीदार, अर्जी के किसी भी भाग में यह बताने में समर्थ नहीं हुआ कि ऐसा अभिकथन किया था।······
>
> इन परिस्थितियों में न्यायालय के पास नियमों के आदेश 23 के नियम 6 के अधीन यथा-अपेक्षितअर्जी को अस्वीकार करने के सिवाय कोई दूसरा विकल्प नहीं है क्योंकि उससे कोई भी वाद-हेतुक प्रकट नहीं होता है।" (पृष्ठ 536, 537)

38. **चरण लाल साहू** बनाम **श्री फखरुद्दीन अली अहमद और अन्य**[3] के मामले में उक्त अधिनियम की धारा 5-ग की अपेक्षा के अननुपालन के कारण अर्जीदार को सुने जाने

---

[1] [1984] 2 उम० नि० प० 833=[1984] 2 एस० सी० आर० 61.

[2] [1988] 3 उम० नि० प० 633=[1988] 1 एस० सी० आर० 525.

[3] ए०आई० आर० 1975 एस० सी० 1288

के कानूनी अधिकार के बारे में ऐसी ही प्रारंभिक आपत्ति (आक्षेप) को स्वीकार कर लिया गया और कथन यह कहते हुए निर्वाचन अर्जी को आरंभ में ही खारिज कर दिया गया :

> "......यह दलील दी गई कि संविधान के अनुच्छेद 58 के अधीन किसी व्यक्ति के राष्ट्रपति के पद के निर्वाचन के लिए एक अभ्यर्थी के रूप में नामनिर्देशित किए जाने के लिए किसी रूप में कोई रुकावट नहीं है यदि वह यह समाधन करा सकता है कि वह संसद् सदस्य के रूप में निर्वाचित होने के लिए अर्हित है। किंतु हम यह समझने में असमर्थ हैं कि यह अनुच्छेद याची की किस रूप में सहायता करता है। हमारी राय में, आक्षेपित धाराओं में ऐसी कोई बात नहीं है जो अनुच्छेद 58 से असंगत हो। अनुच्छेद 71 (3), जो संसद् में राष्ट्रपति या उप-राष्ट्रपति के निर्वाचन के बारे में या उसके संबंध में किसी मामले को विधि द्वारा विनियमित करने की शक्ति निहित करता है, संविधान के अन्य उपबंधों के अधीन है, जिनके अंतर्गत अनुच्छेद 58 भी है किंतु केवल इसलिए कि कोई अभ्यर्थी अनुच्छेद 58 के अधीन अर्हित है, इसका यह अर्थ नहीं होता कि उसे उस विधि की अपेक्षाओं का पालन करने से छूट प्राप्त है, जो उस ढंग और रीति को विनियमित करने के लिए, जिसमें नामनिर्देशन पत्र फाइल किए जाने चाहिए, अनुच्छेद 71 (3) के अधीन संसद् द्वारा बनाई जा सकेंगी। यदि अर्जीदार अनुच्छेद 71 (3) के अधीन शक्ति का प्रयोग करते हुए पारित ऐसी किसी विधि की अपेक्षाओं का पालन नहीं करता, तो वह यह दावा नहीं कर सकता कि उसे सम्यक् रूप से नामनिर्देशित किया गया है और वह उक्त निर्वाचन के लिए एक "अभ्यर्थी" नहीं होगा।
>
> मामले को इस दृष्टि देखते हुए, हम यह नहीं सोचते कि अर्जीदार को अर्जी लाने का कोई कानूनी अधिकार है और तद्नुसार उसे खारिज किया जाता है।"

39. इस न्यायालय के पूर्ववर्ती विनिश्चयों ने अर्जीदार की इस दलील को भी स्पष्टतः नकार दिया है कि न्यायालय इस विचारण को जारी रखने के लिए बाध्य है, भले ही कोई विचारणीय विवाद्यक उद्भूत नहीं होता हो और उसे मात्र अधिनियम की धारा 17 के कारण अपेक्षित कानूनी अधिकार प्राप्त नहीं है। इसी अर्जीदार द्वारा फाइल किए एक मामले सहित, प्रोद्धृत मामलों से यह दर्शित होता है कि त्रुटियुक्त अर्जियों को आरंभ में ही खारिज कर दिया गया था। विचारण, निर्वाचन अर्जी के प्रस्तुत किए जाने के साथ ही आरंभ हो जाता है और इस प्रक्रम पर उक्त अर्जी की खारिजी का इस आधार पर किया गया आदेश कि उक्त अर्जी किसी विधि द्वारा वर्जित होने के कारण या कोई वाद हेतुक प्रकट न करने के कारण चलने योग्य नहीं है, विचारण के निष्कर्ष पर खारिजी का आदेश है क्योंकि ऐसी किसी अर्जी के विचारण में आगे कोई कदम/कार्रवाई अनुध्यात नहीं है। अधिनियम की धारा 17 में "विचारण" शब्द को इसी रूप में समझना होगा, यदि धारा 17 आरंभ में खारिजी सहित, सभी अर्जियों की खारिजी को लागू होनी है। यह मत सुप्रीम कोर्ट रूल्स के आदेश 23, नियम 6 से भी संगत है, जो आदेश 39 नियम 34 के आधार पर लागू होता है, जैसा कि इस न्यायालय द्वारा अनेक बार अभिनिर्धारित किया गया है।

40. अतः 1992 की निर्वाचन अर्जी सं० 1 खारिज किए जाने योग्य है क्योंकि वह

दिए हुए कारणों से चलने योग्य नहीं है। इस अर्जीदार द्वारा दिए गए अन्य अस्पष्ट और सामान्य आधारों पर 1992 की निर्वाचन अर्जी सं० 2 में अर्जीदार द्वारा उठाए गए ऐसे ही मुद्दों के साथ बाद में विचार किया गया है।

1992 की निर्वाचन याचिका सं० 2

41. याची, काका जोगिन्दर सिंह, जिसने यह निर्वाचन-याचिका फाइल की है, सम्यक् रूप से नामनिर्देशित अभ्यर्थी था और इसलिए उच्चतम न्यायालय नियमावली के आदेश 34, नियम 7 के साथ पठित, अधिनियम की धारा 14-क द्वारा यथापेक्षित यह याचिका उपस्थापित की गई है। हम सर्वप्रथम निर्वाचन-याचिका में दावाकृत अनुतोषों का उल्लेख करेंगे। कुल मिलाकर 9 अनुतोषों का दावा किया गया है; और 10वां (अनुतोष) साधारण अनुतोष है, जिस पर विनिर्दिष्ट रूप से विचार किए जाने की आवश्यकता नहीं है। प्रार्थना-खंड में क्रम सं० 1, 2, 3, 5, 6, और 7 पर वर्णित अनुतोष स्पष्टतः मिथ्या धारणा पर आधारित हैं और वे निर्वाचन-याचिका की परिधि के बाहर हैं। केवल क्रम सं० 4, 8 और 9 पर वर्णित अनुतोषों पर ही विचार किए जाने की आवश्यकता है, जिनमें यह प्रार्थना की गई है कि निर्वाचित अभ्यर्थी डा० शंकर दयाल शर्मा का निर्वाचन शून्य घोषित किया जाए, डा० शंकर दयाल शर्मा, प्रो० जी० जी० स्वैल और श्री राम जेठमलानी के नामनिर्देशन पत्रों की स्वीकृति (स्वीकार किया जाना) सदोष (दोषपूर्ण/गलत रूप में की गई) घोषित की जाए; और याची, काका जोगिन्दर सिंह उर्फ धरती पकड़ को भारत का सम्यक् रूप से निर्वाचित राष्ट्रपति घोषित किया जाए। इन अनुतोषों का अनिवार्यतः धारा 18(1)(ग) में वर्णित, अन्य तीनों अभ्यर्थियों, अर्थात् डा० शंकर दयाल शर्मा, प्रो० जी० जी० स्वैल और श्री राम जेठमलानी के नामनिर्देशन पत्रों की सदोष स्वीकृति के आधार पर ही दावा किया गया है। याची, काका जोगिन्दर सिंह को सम्यक् रूप से निर्वाचित घोषित करने के अतिरिक्त अनुतोष को अधिनियम की धारा 19 लागू होती है, जिसमें यह विहित किया गया है कि ऐसी और घोषणा के लिए न्यायालय की यह राय अवश्य ही होनी चाहिए कि "वास्तव में याची...... ने विधिमान्य मतों में से बहुसंख्यक (अधिसंख्य) मत प्राप्त किए हैं। निर्वाचन-याचिका में ऐसा कोई प्रकथन नहीं किया गया है और न याची द्वारा सुनवाई के प्रक्रम पर भी ऐसा कोई प्राख्यान ही किया गया। इस प्रकार याची द्वारा प्रार्थना-खंड में क्रम सं० 9 पर उसके द्वारा दावाकृत अनुतोष में ईप्सित इस अतिरिक्त घोषणा का कोई आधार नहीं है। अतः निर्वाचन-याचिका अनिवार्यतः, अन्य तीनों अभ्यर्थियों के नामनिर्देशन पत्रों की सदोष स्वीकृति (गलत रूप में स्वीकार करने) के, धारा 18(1)(ग) में अंतर्विष्ट, आधार तक ही सीमित रखी जानी है।

42. निस्संदेह, निर्वाचन-याचिका में अनेक अन्य बातें कही गई हैं किन्तु वे अधिनियम की धारा 18 में अंतर्विष्ट कोई अन्य आधार गठित करने या उठाने के लिए तात्त्विक तथ्यों के प्रकथन की कोटि में नहीं आती हैं। 'अनुचित प्रभाव' के प्रति एक सरसरी निर्देश याचिका में है किन्तु प्रकथनों से सामान्य मापदंड के अनुसार भी अभिवचनों की अध्यपेक्षा की पूर्ति नहीं होती, अधिनियम की धारा 18 की उपधारा (2) की कड़ी अध्यपेक्षाओं की पूर्ति का तो प्रश्न ही नहीं है। सुनवाई के दौरान भी याची ने हमारे समक्ष मुख्यतः, यथा पूर्व वर्णित, रिटर्निंग आफिसर के समक्ष उसके द्वारा उठाए गए आक्षेपों का ही विशेष रूप से अवलंब लेते

1992(9) eILR(PAT) SC 1

हुए, अन्य तीनों अभ्यर्थियों के नामनिर्देशन प्रत्रों की सदोष स्वीकृति की बाबत तर्क दिए। अतः हम अधिनियम की धारा 18(1)(ग) में अंतर्विष्ट आधार पर याचिका के चलने योग्य होने के प्रश्न पर विचार करेंगे। अस्पष्ट और सामान्य रूप से वर्णित कुछ अन्य आधारों के प्रति निर्देश बाद में किया गया है।

43. याची का पक्षकथन, जैसा कि वह उसके अभिवचनों और तर्कों से प्रकट होता है, यह है कि अन्य तीनों अभ्यर्थियों के नामनिर्देशन पत्र गलत तौर पर स्वीकार किए गए, यद्यपि उनमें अभ्यर्थियों, उनके प्रस्थापकों और समर्थकों के अपूर्ण वर्णन थे। यह दलील नामनिर्देशन पत्रों की अंतर्वस्तुओं पर आधारित है। राष्ट्रपतीय और उप-राष्ट्रपतीय निर्वाचन नियमावली, 1974 के नियम 4 के साथ पठित, प्ररूप 2 के प्रति निर्देश से सभी अभ्यर्थियों के नामनिर्देशन पत्रों के परिशीलन से यह दर्शित होता है कि इस याची सहित, चारों अभ्यर्थियों में से जिनके नामनिर्देशन पत्र रिटर्निंग आफिसर द्वारा स्वीकार किए गए, किसी भी अभ्यर्थी के नामनिर्देशन पत्र में कोई त्रुटि, दोष या अस्पष्टता नहीं थी। इस याची के नामनिर्देशन पत्र की अंतर्वस्तुएं समान हैं। याची की शिकायत मुख्यतः प्ररूप 2 के स्तंभ 2 और 4 तक ही सीमित थी। स्तंभ 2 में प्रस्थापकों/समर्थकों के पूर्ण नाम के वर्णन की अपेक्षा की गई है और स्तंभ 4 में उस राज्य/संघ राज्यक्षेत्र के उल्लेख की अपेक्षा की गई है, जिसमें/जिससे वे निर्वाचित हुए थे। चारों अभ्यर्थियों के नामनिर्देशन पत्रों के परिशीलन मात्र से, जो रिटर्निंग आफिसर द्वारा स्वीकार किए गए थे, यह दर्शित होता है कि इन अध्यपेक्षाओं का सम्यक् रूप से अनुपालन किया गया था और इन नामनिर्देशन पत्रों में प्रस्थापकों और समर्थकों के नाम या किसी अन्य विहित विशिष्ट की बाबत कोई अस्पष्टता नहीं थी। याची ने यह दलील दी कि अभ्यर्थियों, प्रस्थापकों और समर्थकों के वर्णन में कुछ और विशिष्टियां दिए जाने की अपेक्षा की गई है। तथापि, याची द्वारा वर्णित कोई और विशिष्टि नामनिर्देशन पत्र के विहित प्ररूप या नियमों की अध्यपेक्षा नहीं है। इस प्रकार धारा 18(1)(ग) के अधीन इन नामनिर्देशन पत्रों में से किसी नामनिर्देशन पत्र की सदोष स्वीकृति का, प्रथमदृष्ट्या आधार भी साबित करने के लिए इन नामनिर्देशन पत्रों में से किसी नुक्स (त्रुटि) का न तो अभिवचन किया गया है और न वह दर्शित ही किया गया है, जिससे कि इस मुद्दे पर विचारणीय विवाद्यक उठाया जा सके। हम इस स्थल पर धारा 5ङ की उपधारा (5) के प्रति भी निर्देश करना उचित समझते हैं, जिसमें यह उपबंध किया गया है कि "रिटर्निंग आफिसर ऐसे किसी नुक्स के आधार पर कोई नामनिर्देशन पत्र अस्वीकार नहीं करेगा, जो सारभूत स्वरूप का नहीं है।" याची द्वारा नामनिर्देशन पत्र में किसी प्रकार के नुक्स का अभिवचन नहीं किया गया है और न वह दर्शित ही किया गया है (सारभूत स्वरूप के नुक्स का तो प्रश्न ही नहीं है) जिससे कि इस प्रश्न पर और आगे विचार या उक्त प्रयोजन के लिए विवाद्यक का विरचित किया जाना आवश्यक हो। अतः निर्वाचन याचिका से अधिनियम की धारा 18(1)(ग) में वर्णित आधार के विचारण के लिए कोई वाद-हेतुक प्रकट नहीं होता है।

44. वह एकमात्र अन्य आधार, जिसके प्रति याचिका में आकस्मिक निर्देश किया गया प्रतीत होता है और जिसके प्रति सुनवाई के दौरान सरसरी तौर पर निर्देश किया गया, धारा 18(1)(क) में अंतर्विष्ट आधार है, जिसे धारा 18(2) के साथ पढ़ा जाना है। आकस्मिक निर्देश अनुचित प्रभाव के आधार के संबंध में है। इस प्रक्रम पर याचिका के

पैरा 2, 5 और 6 की अंतर्वस्तुओं के प्रति निर्देश करना उचित होगा, जिनका याची द्वारा अवलंब लिया गया और जिन्हें उसने अधिनियम की धारा 18 के अधीन आधार उठाने के लिए तात्त्विक प्रकथन माना है। हम धारा 18(1)(ग) से संबंधित आधार पर पहले ही विचार कर चुके हैं, जिससे याचिका का पैरा 2 संबद्ध है। पैरा 6(क) में अनेक उप-पैरा हैं। उप-पैरा (1) में यह कहा गया है कि नामनिर्देशन पत्र केवल एक प्रस्थापक द्वारा प्रस्तुत किए गए थे, न कि 10 प्रस्थापकों द्वारा, और प्रस्थापकों तथा समर्थकों में प्रधान मंत्री, केन्द्रीय मंत्री, मुख्य मंत्री और संसद्-सदस्य सम्मिलित थे। याची द्वारा यह दर्शित करने का कोई प्रयास नहीं किया गया कि यह बात अधिनियम की धारा 18(1) के अधीन आधार गठित करती है या वह किसी विधि के उल्लंघन या अननुपालन की कोटि में आती है। इसके अतिरिक्त, धारा 5-ख में, जिसमें नामनिर्देशन पत्र के प्रस्तुत किए जाने और विधिमान्य नामनिर्देशन की अध्यपेक्षाओं का उपबंध किया गया है, ऐसी कोई अध्यपेक्षा विहित नहीं की गई है। उप-धारा (2) में यह कहा गया है कि अन्य तीनों अभ्यर्थियों की आयु 65 वर्ष से अधिक है। यह बात भी असंगत है और उसका अवलंब लेने का कोई प्रयास नहीं किया गया। इसी प्रकार उप-पैरा (3) और (4) भी असंगत हैं और याची ने अधिनियम की धारा 18 के अधीन आधार के रूप में सुनावाई के प्रक्रम पर उनका अवलंब लेने का कोई प्रयास नहीं किया। विधि में पूर्ण निर्वाचक नामावली फाइल करने की कोई अध्यपेक्षा नहीं है, सिवाय अधिनियम की धारा 5(ख)(2) के अनुसार निर्वाचक नामावली में अभ्यर्थी से संबंधित प्रविष्टि की प्रमाणित प्रति के। संविधान के अनुच्छेद 58 के स्पष्टीकरण को देखते हुए, उप-पैरा (5) मिथ्या धारणा पर आधारित है। उप-पैरा (6) एकमात्र शेष उप-पैरा है, जिसमें धारा 18(1)(क) में अंतर्विष्ट आधार का अभिवचन करने का प्रयास किया गया है। अभ्यर्थियों द्वारा शपथ लेने की कोई अतिरिक्त अध्यपेक्षा नहीं है, जैसा कि इस न्यायालय के पूर्वतर विनिश्चयों द्वारा स्थापित किया जा चुका है और इसलिए उप-पैरा (6) के इस भाग पर और अधिक विचार करने की आवश्यकता नहीं है। शेष पैरा में यह प्रकथन किया गया है कि रिटर्निंग आफिसर, श्री सुदर्शन अग्रवाल को भारत के उप-राष्ट्रपति के रूप में डा० शंकर दयाल शर्मा, निर्वाचित अभ्यर्थी, द्वारा एक वर्ष का सेवावधि-विस्तार दिया गया था, जो अवैध है और अनुचित प्रभाव (असम्यक् असर) की कोटि" में आता है। कुछ उपबंधों की सांविधानिक विधिमान्यता से संबंधित उप-पैरा (6) में किए गए प्रकथन का इस न्यायालय के पूर्वतर विनिश्चयों द्वारा समाधान हो जाता है और इसके अतिरिक्त वह निर्वाचन-याचिका की परिधि से परे भी है। इस बारे में कोई प्रकथन नहीं किया गया है कि श्री सुदर्शन अग्रवाल को दिया गया एक वर्ष का सेवावधि-विस्तार किस प्रकार अवैध है और अनुचित प्रभाव (असम्यक् असर) के प्राख्यान मात्र की विशिष्टियों का कोई उल्लेख तक नहीं किया गया है। धारा 18(2) को देखते हुए, धारा 18(1)(क) में अनुचित प्रभाव (असम्यक् असर) के अपराध का वही अर्थ है जो भारतीय दंड संहिता के अध्याय IX-क में दिया गया है। भारतीय दंड संहिता की धारा 171-ग में निर्वाचनों में असम्यक् असर को इस प्रकार परिभाषित किया गया है—

> "171-ग. निर्वाचनों में असम्यक् असर डालना—(1) जो कोई किसी निर्वाचन अधिकार के निर्बाध प्रयोग में स्वेच्छया हस्तक्षेप करता है या हस्तक्षेप करने का प्रयत्न करता है, वह निर्वाचन में असम्यक् असर डालने का अपराध करता है।

1992(9) eILR(PAT) SC 1

(2) उपधारा (1) के उपबंधों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना जो कोई—

(क) किसी अभ्यर्थी या मतदाता को, या किसी ऐसे व्यक्ति को जिससे अभ्यर्थी या मतदाता हितबद्ध है, किसी प्रकार की क्षति करने की धमकी देता है, अथवा

(ख) किसी अभ्यर्थी या मतदाता को यह विश्वास करने के लिए उत्प्रेरित करता है या उत्प्रेरित करने का प्रयत्न करता है कि वह या कोई ऐसा व्यक्ति, जिससे वह हितबद्ध है, दैवी अप्रसाद या आध्यात्मिक परिनिन्दा का भाजन हो जाएगा या बना दिया जाएगा,

यह समझा जाएगा कि वह उपधारा (1) के अर्थ के अंतर्गत ऐसे अभ्यर्थी या मतदाता के निर्वाचन अधिकार के निर्बाध प्रयोग में हस्तक्षेप करता है।

(3) लोक नीति की घोषणा या लोक कार्यवाही का वचन या किसी वैध अधिकार का प्रयोग मात्र, जो किसी निर्वाचन अधिकार में हस्तक्षेप करने के आशय के बिना है, इस धारा के अर्थ के अंतर्गत हस्तक्षेप करना नहीं समझा जाएगा।"

45. भारतीय दंड संहिता की धारा 171-ग के परिशीलन मात्र से यह दर्शित होता है कि निर्वाचनों में असम्यक असर के संघटक तत्व अनेक हैं और उन्हें अधिनियम की धारा 18 (1) (क) में असम्यक् असर के अपराध के अर्थ में पढ़ा जाना है। अधिनियम की धारा 18 (1) (क) के अधीन आधार के अभिवाचित कहे जा सकने से पूर्व, जिसमें निर्वाचन-याचिका में विचारणीय विवाद्यक उठाया गया हो, यह अवश्य ही दर्शित किया जाना चाहिए कि असम्यक् असर के अपराध के संघटक तत्व गठित करने के लिए तात्विक तथ्य कम से कम निर्वाचन-याचिका में अभिवाचित किए गए हैं। याची ने इन अध्यपेक्षाओं का दिखावटी तौर पर भी पालन करने का कोई प्रयास नहीं किया है और उक्त आधार उठाते हुए, तात्विक तथ्यों का अभिवचन करने का कोई प्रयास किए बिना याचिका में केवल "निर्वाचन में असम्यक् असर" शब्दों को दोहराना ही उचित समझा है। स्पष्टतः इस कारण याची ने सुनवाई के प्रक्रम पर किसी प्रकार की गंभीरता के बिना इस आधार का उल्लेख करने का भी कोई प्रयास नहीं किया।

46. अत: यह स्पष्ट है कि यद्यपि 1992 की निर्वाचन-याचिका सं० 2 में याची काका जोगिन्दर सिंह को उच्चतम न्यायालय नियमावली के आदेश 39, नियम 7 के साथ पठित, अधिनियम की धारा 14-क द्वारा यथापेक्षित, याचिका प्रस्तुत करने का अधिकार प्राप्त है, तथापि उन तात्विक तथ्यों और आधारों का, जिनके आधार पर निर्वाचित अभ्यर्थी के निर्वाचन को शून्य घोषित किए जाने के अनुतोष की ईप्सा की गई है, अभिवचन नहीं किया है, जिससे कोई वाद-हेतु प्रकट हो या कोई विचारणीय विवाद्यक उदभूत हो। अत: शुद्ध परिणाम वही है, जो 1992 की निर्वाचन याचिका सं० 1 का था और प्रारंभिक आक्षेप को कायम रखते हुए, यह याचिका भी खारिज किए जाने योग्य है। यह अभिनिर्धारित किया ही जाना चाहिए कि निर्वाचन-याचिका में कोई वाद-हेतुक प्रकट नहीं होता है और इसलिए वह

1992(9) eILR(PAT) SC 1

उच्चतम न्यायालय नियमावली के आदेश 39 के नियम 34 के साथ पठित आदेश 39 के नियम 2 और 5 तथा आदेश 23 के नियम 6 और राष्ट्रपतीय और उप-राष्ट्रपतीय निर्वाचन अधिनियम, 1952 के आज्ञापक उपबंधों के आधार पर खारिज किए जाने योग्य है।

47. हमने जो कुछ ऊपर कहा है, वह उन सब बातों को ध्यान में रखते हुए निर्वाचन याचिकाओं का निपटारा करने के लिए पर्याप्त है, जो दोनों याचिकाओं में संगत या अध्यपेक्षाकारी विचारणाएं मानी जा सकती हैं। इन दोनों याचिकाओं में संगत चीजों को असंगत चीजों से छांट कर अलग करने का कार्य बहुत (उबाऊ) रहा है। 1992 की निर्वाचन याचिका सं० 1 में याची मिथिलेश कुमार सिन्हा के अड़ियल रवैये और निष्क्रियता के कारण यह कार्य और भी अधिक कठिन रहा है, जो सुनवाई की समाप्ति पर निर्णय सुनाए जाने के लिए मामले को समाप्त किए जाने के पश्चात् भी कुछ और लिखित निवेदन प्रस्तुत करके अपने तर्क जारी रखने के लिए अड़े रहे। जो कुछ उन्होंने पहले कहा था, उसके अतिरिक्त उसमें कोई भी बात तात्विक या उपयोगी नहीं थी। लिखित निवेदनों में कुछ स्थानों पर मिथिलेश कुमार सिन्हा द्वारा प्रयुक्त भाषा भी अशिष्ट थी। यह बात संदिग्ध है कि उन्होंने ऐसा जानबूझकर किया या अनजाने में किया किंतु हमारी यह धारणा है कि उनके सभी कार्य जानबूझकर किए गए हैं। हम याची मिथिलेश कुमार सिन्हा के इस दृष्टिकोण और आचरण की जोरदार शब्दों में निंदा करते हैं, जिन्होंने स्वयं याची के रूप में उन्हें न्यायालय द्वारा अनुदत्त अनुग्रह का स्पष्ट रूप से दुरुपयोग किया है। सामान्यतया हम निर्णय में ऐसा नहीं कहते किंतु हम ऐसा इसलिए कह रहे हैं क्योंकि हम यह पाते हैं कि सुनवाई के दौरान उन्हें हमारे द्वारा प्रदत्त संकेत का वांछित प्रभाव नहीं हुआ है।

48. इस संदर्भ में हम ऊपर निर्दिष्ट मिथिलेश कुमार सिन्हा वाले मामले (एस० सी० आर०, पृ० 537) में संविधान पीठ की ओर से निर्णय सुनाते हुए, न्या० वेंकट रामैया की मताभिव्यक्ति का उल्लेख करना उचित समझते हैं, जो उन्होंने इसी याची के संबंध में कही है और उसकी इस प्रक्रम पर पुनरावृत्ति उचित है—

> "निर्णय समाप्त करने से पूर्व हम यह मत व्यक्त करना चाहेंगे कि याची अपने मामले के बारे में गंभीर प्रतीत नहीं हुआ। एक प्रक्रम पर उसने न्यायालय के समक्ष याचिका फाइल करने के पश्चात् यह दलील दी कि इस न्यायालय को मामले की सुनवाई करने की कोई सक्षमता प्राप्त नहीं थी और एक अन्य प्रक्रम पर वह यह चाहता था कि उसकी याचिका की सुनवाई 51 न्यायाधीश करें, जबकि इस न्यायालय की अधिकतम अनुज्ञेय संख्या उक्त संख्या की लगभग आधी है और इस न्यायालय के न्यायाधीशों की विद्यमान संख्या उक्त संख्या के एक तिहाई से भी कम है। नियमावली के आदेश 39 के नियम 20 में यह अपेक्षा की गई है कि राष्ट्रपति और उप-राष्ट्रपति के पदों के लिए निर्वाचन को प्रश्नगत करने वाली प्रत्येक याचिका इस न्यायालय के एक पीठ के समक्ष रखी जाएगी और उसके द्वारा उसकी सुनवाई और निपटारा किया जाएगा, जिसमें पांच न्यायाधीशों से कम न्यायाधीश नहीं होंगे। हम निर्वाचन-याचिका फाइल करने के लिए पात्र शुद्ध अन्तकरण वाले प्रत्येक नागरिक से यह आशा करते हैं कि वह अधिनियम द्वारा विहित आधारों पर निर्वाचन को प्रश्नगत करेगा, तथापि हम यह नहीं चाहते हैं कि कोई भी याची इस न्यायालय

का, अन्तर्वस्तु और केवल सस्ता प्रचार पाने के लिए मामले को लागू होने वाली विधि के उपबंधों पर पर्याप्त ध्यान दिए बिना, याचिका फाइल करने के फोरम (न्यायालय) के रूप में इस न्यायालय का दुरुपयोग करे। हमें खेद के साथ यह कहना पड़ रहा है कि कुछ दिनों से प्रतिदिन समाचारपत्र में अपना नाम देखने की बुरी लत पड़ गई है और इस लत के शिकार लोगों की संख्या भी दिन-प्रतिदिन बढ़ रही है। तथापि, हम इस न्यायालय के समक्ष उसके द्वारा मौखिक रूप से और लिखित रूप से किए गए कुछ अन्य असंगत और अनुचित कथनों के प्रति निर्देश नहीं कर रहे हैं। कदाचित् याची, जो भारत का राष्ट्रपति होना चाहता था, उस बात के प्रभाव को नहीं समझता था, जो वह कह रहा था। हम मामला यहीं समाप्त करते हैं।"

49. यह स्पष्ट है कि न्या० वेंकट रामय्या की उपर्युक्त मताभिव्यक्तियों का याची मिथिलेश कुमार सिन्हा पर वांछित प्रभावों नहीं पड़ा। हमारे समक्ष मिथिलेश कुमार सिन्हा के सारहीन निवेदनों में से एक निवेदन यह था कि उच्चतम न्यायालय का कोई भी आसीन न्यायाधीश उसकी याचिका की सुनवाई करने के लिए सक्षम नहीं था क्योंकि उन सब के भारत के राष्ट्रपति द्वारा प्रभावित होने की संभावना है और इसलिए उसकी याचिका की एक न्यायपीठ द्वारा सुनवाई की जानी चाहिए, जिसमें उच्चतम न्यायालय के सभी आसीन न्यायाधीश और सभी सेवा-निवृत्त न्यायाधीश समाविष्ट हों। इससे वह सीमा उपदर्शित हो जाएगी, जिस तक इस न्यायालय का समय ऐसे तुच्छ अभिवाकों द्वारा नष्ट किया गया है। भविष्य में ऐसे प्रयासों को रोकने के लिए बहत्तर लोकहित में समुचित कदम उठाए जाने चाहिए।

50. हम इस न्यायालय के कुछ पूर्वतर विनिश्चयों के प्रति सरसरी तौर पर निर्देश करना उचित समझते हैं, जिनमें कोई आधार दिए बिना इन याचियों द्वारा आकस्मिक और अस्पष्ट रूप से वर्णित कुछ समान मुद्दे अस्वीकार कर दिए गए हैं। इन दोनों याचिकाओं में अभिवचनों के उदारतम मानदंड द्वारा भी अत्यधिक खामियां हैं, जबकि निर्वाचन-याचिकाओं में मानदंड और भी कठोर है।

51. ऊपर निर्दिष्ट चरण लाल साहू **बनाम** नीलम संजीव रेड्डी वाले मामले में सात न्यायाधीशों के न्यायपीठ ने, राष्ट्रपतीय और उप-राष्ट्रपतीय निर्वाचन अधिनियम, 1952 के अधीन निर्वाचन-याचिका फाइल करने के अधिकार पर विचार करने के अतिरिक्त, भारत के संविधान के अनुच्छेद 58 और 71 की परिधि वर्णित करते समय, कतिपय उपबंधों की सांविधानिक विधिमान्यता को दी गई चुनौती पर विचार किया और उसे अस्वीकार कर दिया।

52. **श्री बाबूराम पटेल और अन्य बनाम डा० जाकिर हुसैन और अन्य**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया कि राष्ट्रपति के पद पर निर्वाचन के लिए खडे होने वाले अभ्यर्थी को राष्ट्रपति के रूप में निर्वाचन हेतु पात्र होने के लिए कोई शपथ लेने की आवश्यकता नहीं है; और राष्ट्रपति और मंत्रियों द्वारा प्रचार पर आधारित, अधिनियम की धारा 18 के अधीन अनुचित प्रभाव (असम्यक् असर) का आधार गठित करने के लिए

[1] [1968] 2 एस० सी० आर० 133.

अपेक्षित अभिवचनों की प्रकृति भी उपदर्शित की गई। **शिव कृपाल सिंह** बनाम **श्री वी० वी० गिरि**[1] वाले मामले में एक बार पुनः अधिनियम की धारा 18 के अधीन अनुचित प्रभाव का आधार गठित करने की अध्यपेक्षाओं को उपदर्शित करने के अतिरिक्त यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि अधिनियम की धारा 18 में वर्णित आधारों से भिन्न आधारों पर निर्वाचन को चुनौती नहीं दी जा सकती है। **चरण लाल साहू** बनाम **श्री फखरूद्दीन अली अहमद और अन्य**[2] वाले मामले में अधिनियम की धारा 5-ब और 5-स की सांविधानिक विधिमान्यता की पुष्टि की गई। **चरण लाल साहू और अन्य** बनाम **ज्ञानी जैल सिंह और एक अन्य**[3] वाले मामले में ऐसी निर्वाचन याचिका में प्रमित, विनिर्दिष्ट और स्पष्ट अभिवचनों की आवश्यकता पर जोर दिया गया; अधिनियम की धारा 18 के अधीन अनुचित प्रभाव का आधार उठाने की अध्यपेक्षाओं पर पुनः बल दिया गया; याचिका में अभ्यर्थी की उपयुक्तता के अभिवाक् की असंगति उपदर्शित की गई; विचारणीय विवाद्यक उठाने के लिए निर्वाचन याचिका में अध्यपेक्षाओं को उपदर्शित करते समय, अनुच्छेद 84(क) द्वारा विहित शपथ की अभ्यर्थी द्वारा किसी अध्यपेक्षा के अभाव का उल्लेख किया गया। इस बात पर भी जोर दिया गया कि निर्वाचन लड़ने या उसे चुनौती देने के अधिकार सहित, निर्वाचनों से उद्भूत होने वाले अधिकार सामान्य विधि (कामन ला) अधिकार नहीं हैं बल्कि वे उन कानूनों की सृष्टि हैं, जो उक्त अधिकारों को सर्जित, प्रदत्त या सीमित करते हैं और इसलिए इस प्रश्न का विनिश्चय करने के लिए कि क्या किसी अभिकथित आधार पर निर्वाचन को अपास्त किया जा सकता है, न्यायालयों को उक्त विधि के ढांचे के अंदर ही कृत्य करना होता है, उससे परे नहीं। ऐसी ही स्थिति में संविधान पीठ की ओर से निर्णय सुनाते हुए, मु० न्या० चन्द्रचूड़ ने यह भी मत व्यक्त किया—

> "यह खेद की बात है कि भारत के राष्ट्रपति के उच्च पद के लिए निर्वाचन को चुनौती देने वाली निर्वाचन-याचिकाएं ऐसी अभद्रतापूर्ण रीति में फाइल की जाए, जैसी कि इन दोनों याचिकाओं की है। याचिकाओं में तात्कालिक (बिना किसी पूर्व तैयारी के) उप-संजाति (हाजिरी) हुई है और ऐसा प्रतीत होता है कि इन याचिकाओं का प्रारूपण करने की रीति या उनमें दी गई दलीलों पर पुनः दृष्टि भी नहीं डाली गई है, पुनर्विचार का तो प्रश्न ही नहीं है। ऐसी याचिकाओं के फाइल किए जाने को निरुत्साहित करने के लिए, हमारा दोनों याचियों के विरुद्ध खर्चों का भारी आदेश पारित करना न्यायोचित होता। किंतु उससे यह अनावश्यक मिथ्या धारणा उत्पन्न होने की संभावना है कि यह न्यायालय, जो निर्वाचन-याचिकाओं का, जिनके द्वारा राष्ट्रपतीय या उप-राष्ट्रपतीय निर्वाचन को चुनौती दी जाती है, विनिश्चय करने के लिए अनन्य न्यायालय के रूप में अधिनियम द्वारा गठित किया गया है, ऐसी याचिकाओं को विचारार्थ ग्रहण करना नापसन्द करता है। जनतंत्र के कृत्यकरण का यह आवश्यक तत्व है कि लोक पदों के लिए निर्वाचन स्वतंत्र अधिकरण की संवीक्षा के लिए खुला होना चाहिए। इन दोनों याचिकाओं में खर्चों के भारी आदेश के

---

1 [1971] 2 एस० सी० आर० 197.

2 एस० आई० आर० 1975 एस० सी० 1288.

3 [1984] 2 एस० सी० आर० 6.

1992(9) eILR(PAT) SC 1

परिणामस्वरूप, चाहे वे स्वयं अपने तथ्यों के आधार पर कितने ही न्यायोचित क्यों न हों, भावी अवसर पर साधार दावे का आरंभ में ही अंत नहीं हो जाना चाहिए। अतः हम खर्चों का कोई आदेश पारित करने से प्रविरत रहते हैं और उसके बजाय उस हल्के ढंग और उदासीनतापूर्वक रीति के प्रति अपना अननुमोदन व्यक्त करते हैं, जिसमें इन दोनों याचिकाओं का प्रारूपण किया गया है और वे फाइल की गई हैं।"

(पृ० 17)

53. इससे भी अधिक अशिष्टतापूर्ण रीति को देखते हुए, जिसमें ये याचिकाएं एक दशक पश्चात् अब भी फाइल की जा रही हैं, समान स्थिति में खर्चों का भारी आदेश करने से न्यायालय को रोकने की बात का प्रभाव समाप्त हो गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि।

54. ऊपर निर्दिष्ट **मिथिलेश कुमार** वाले मामले में इस बात पर पुनः जोर दिया गया कि अधिनियम की धारा 18 उन आधारों की निःशेषकारी है, जिन पर ऐसा निर्वाचन शून्य घोषित किया जा सकता है। हम उस अशिष्टतापूर्ण रीति की निंदा करते हुए, जिसमें इसी याची ने उस समय निर्वाचन याचिका फाइल की थी, पृ० 537 पर न्या० वेंकट रामय्या की मताभिव्यक्तियां पहले ही उद्धृत कर चुके हैं।

55. हमने केवल इस कारण इन विनिश्चयों के प्रति निर्देश किया है कि इन दोनों याचिकाओं में आकस्मिक रूप से अनेक उपबंधों का उल्लेख करके और उससे भी अधिक आकस्मिक रूप से यह कहकर कि उनमें से कुछ असंवैधानिक हैं, जबकि चुनौती का कोई आधार उपदर्शित नहीं किया गया है, निर्वाचन को निरर्थक चुनौती दी गई है। इस संबंध में और अधिक कहना अनावश्यक है।

56. मामलों का निपटारा करने से पूर्व हम यह मत व्यक्त करने के लिए विवश हो गए हैं कि अब समय आ गया है कि इस न्यायालय के पांच न्यायाधीशों के न्यायपीठ द्वारा सुनवाई की अपेक्षा करते हुए अशिष्टतापूर्ण रीति में फाइल की गई ऐसी तुच्छ याचिकाओं को विचारार्थ ग्रहण करने से रोकने के लिए समुचित उपबंध किए जाएं। ऐसी तुच्छ याचिकाओं से एकमात्र जिस उद्देश्य की पूर्ति होती है, वह है याची का कुछ अनुचित प्रचार, जो ऐसी याचिका के फाइल किए जाने का एकमात्र प्रयोजन प्रतीत होता है। स्पष्टतः इस प्रयोजन के लिए मंच (फोरम) के रूप में न्यायालय का उपयोग अनुज्ञात नहीं किया जाना चाहिए। संसद् और राज्य विधानमंडलों के लिए निर्वाचनों को चुनौती देने वाली लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम के अधीन निर्वाचन याचिकाओं की उच्च न्यायालय के एक एकल न्यायाधीश द्वारा सुनवाई अपेक्षित होती है। राष्ट्रपतीय और उपराष्ट्रपतीय निर्वाचनों के गुरुतर महत्व को देखते हुए, ऐसी निर्वाचन याचिकाओं के निवारण के लिए फोरम (न्यायालय) उच्चतम न्यायालय है और उक्त न्यायालय द्वारा विरचित नियमों के अनुसार इन याचिकाओं की पांच न्यायाधीशों के न्यायपीठ द्वारा सुनवाई की जाती है। अनुभव से यह दर्शित होता है कि ऐसी याचिकाओं से संलग्न पवित्रता और महत्व को उस अशिष्टतापूर्ण रीति ने ढोंग बनाकर रख दिया है, जिसमें इस उपचार का अवलंब लिया जाता है। मात्र इस तथ्य से कि इन दोनों याचिकाओं की संपूर्ण परिधि पूर्णतः इस न्यायालय के अनेक पूर्वतर विनिश्चयों के अंतर्गत आती है, जिनमें से कुछ में यही याची पक्षकार थे, यह दर्शित होता है कि विद्यमान उपबंध विधि की प्रक्रिया

(कार्यवाही) के ऐसे दुरुपयोग को रोकने के लिए अपर्याप्त हैं। अब ऐसी तुच्छ याचिकाओं की छानबीन करने के लिए उपबंधों में समुचित संशोधन आवश्यक हो गया है और विचारणीय विवाद्यक विरचित करके, इस न्यायालय के पांच न्यायाधीशों के न्यायपीठ द्वारा केवल गंभीर याचिकाओं के विचारण का उपबंध आवश्यक है। हम इस दिशा में समुचित कार्रवाई की अपेक्षा करते हुए, इस अनुभूत आवश्यकता के प्रति सभी संबंधित लोगों का ध्यान आकर्षित करने के लिए यह मत व्यक्त कर रहे हैं।

57. एक दशक पूर्व ऐसी ही परिस्थिति में फाइल की गई याचिकाओं को खारिज करते समय, खर्चों का आदेश न करने के लिए चरण लाल साहू और अन्य **बनाम** ज्ञानी जैल सिंह और एक अन्य (ऊपर निर्दिष्ट) वाले मामले में मु० न्या० चन्द्रचूड़ द्वारा दिए गए कारण पर गंभीरतापूर्वक विचार करते के पश्चात्, हम समझते हैं कि गत दशक के दौरान आई और गिरावट से यह उपदर्शित होता है कि मात्र इस प्रकार की मताभिव्यक्तियों को कोई वांछित प्रभाव नहीं होता है। हम यह मत व्यक्त करने के लिए विवश हो गए हैं कि निर्वाचन-याचिका को विचारार्थ ग्रहण करने हेतु खर्चों के लिए युक्तियुक्त रकम के प्रतिभूति-निक्षेप की आज्ञापक अध्यपेक्षा जैसा कोई कठोर अध्युपाय नियंत्रण रखने के लिए आवश्यक है।

58. हम उस आकस्मिक रीति के प्रति अपना जोरदार अननुमोदन अभिलिखित करते हैं, जिसमें याचियों ने ये तुच्छ याचिकाएं फाइल की हैं, जिसके परिणामस्वरूप न्यायालय का काफ़ी समय बर्बाद हुआ, जिसका ऐसे लंबित गंभीर मामलों की सुनवाई में लाभदायक रूप से उपयोग किया जा सकता था, जिनकी जल्दी सुनवाई की आवश्यकता थी किंतु जिन पर इन निर्वाचन याचिकाओं को अग्रता मिली, तथापि वर्तमान मामले में हम खर्चों के संबंध में कोई आदेश नहीं कर रहे हैं।

59. तदनुसार, हम ऊपर दिए गए कारणों से, खर्चों के संबंध में कोई आदेश किए बिना, इन दोनों याचिकाओं को खारिज करते हैं।

याचिकाएं खारिज की गईं।

अ०/रा०/न०